Come Home To Heritage.

From the publishers of Chandamama

It's worth preserving. Every issue of it.

For subscriptions : **DOLTON AGENCIES,** 188 N.S.K. Salai, Vadapalani, Madras - 600 026.

बबल बोली-१

आओ बबल गम लाएं, मौज उड़ाएं.

कहनी हो ये बात तो ऐसे बोलो: पहले बबल फुलाओ, फिर अपनी मुट्ठी उसके नीचे लगाओ.

खेल खेल में बबल बनाते रहो, दोस्तों के साथ मौज उड़ाते रहो.

क्या तुम बिग फन से बड़ा बबल बनाना जानते हो?

सबसे पहले बिग फन बबल गम मुंह में डालो. ये जब तक अच्छी तरह नरम न हो जाये, चबाते रहो.

जीभ से इसे अपने आगे के दांतों के पीछे दबाओ और दांतों के बीच से आगे लाओ.

अब जीभ से बनी खाली जगह में जोर से फूंको... और देखो बन जाता है कितना बड़ा बबल.

बबल गम

बड़े बड़े बबल... बड़े आसान!

Trikaya-GP-10.84-HIN

चन्दामामा

संस्थापकः चक्रपाणि　　　　संचालकः नागिरेड्डी

मनुष्य यदि कोई भी कार्य सिद्ध करना चाहता है तो उसे बड़ी सहनशीलता और लगन की आवश्यकता होती है। ऐसा न होकर जल्दबाजी में आकरके उद्‌ण्डता पूर्ण पद्धतियों के द्वारा किसी कार्य को साधने का प्रयत्न करना जान-बूझ कर खतरे को मोल लेना ही होगा। "मंत्र-सिद्धि" नामक कहानी के द्वारा हमें इस सचाई का बोध होता है।

अमर वाणी

परान तोषइतु र्दातुः, न कदापि धन क्षयः,
उद्धृतेपि नदी कूपात्, जले तस्य न हि क्षयः।

[दूसरों को दान देने से दाता की संपत्ति नहीं घटती क्योंकि नदी के सोते में पानी निकालने पर पुनः उस में जल भरता है, पर वह कभी नहीं घटता !]

वर्षः ३७　　　　फरवरी १९८५　　　　अंकः ६

एक प्रतिः २-००　　::　　वार्षिक चन्दाः २४-००
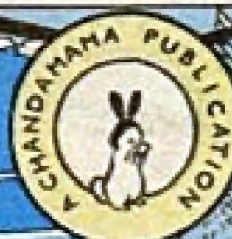
चन्दामामा के संवाद

प्रथम राष्ट्रपति की शत जयन्ती

स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति बाबू राजेंद्र प्रसाद का जन्म सन १८८५ में बिहार में हुआ था। १९८५ उनकी शत जयन्ती का वर्ष है। तेज चलनेवाली अपनी वकालत को तिलांजलि देकर उन्होंने स्वतंत्रता के आन्दोलन में भाग लिया। वे तीन बार राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद वे १९५० में हमारे देश के राष्ट्रपति हुए। १९५२, १९५७ में भी वे पुनः इसी पद केलिए चुने गये।

विश्व का सब से बड़ा केक

केनडा देश के हाईगेट नगर के निवासी जिम हिल्टन ने विश्व का सब से बड़ा केक तैयार किया। ४०० कि. ग्रा. वजनदार इस केक को तैयार करने में उन्हें सिमेंट मिक्चर, क्रेन इत्यादि उपकरणों का प्रयोग करना पड़ा। दो हज़ार लोगों ने इस केक को खाया। इसके पूर्व जिम हिल्टन ने विश्व का सबसे बड़ा आईस्क्रीम तैयार किया था

सीखना कब शुरू होता है ?

अमेरिका के वैज्ञानिकों का कथन है कि शिशु माता के गर्भ में रहते वक्त ही सीखना प्रारम्भ कर देता है। इस सिद्धान्त के अनुसार यह मानने में आश्चर्य की बात नहीं है कि महाभारत की कथा में अभिमन्यु ने,अपनी माता सुभद्रा के गर्भ में रहते समय ही अपने पिता अर्जुन के द्वारा अपनी माता को युद्ध विद्याओं के बारे में जो बातें बताईं , उन्हें सीख ली हैं !

क्या आप जानते हैं ?

१. क्या आप जानते हैं कि सयुक्त राष्ट्र सघ की प्रथम बैठक कब और कहाँ हुई ?

२. कनिष्क की राजधानी नगरी पुरुषपुर किस नाम से प्रसिद्ध हुई ?

३. कांचीपुर को राजधानी बनाकर दक्षिण भारत पर शासन करने वाले राजा कौन थे ?

४. दिल्ली नगर क निर्माण तथा नाम से सम्बन्ध रखने वाले मौर्य शासक कौन थे ?

५. क्या आप बता सकते हैं कि सुलतान सिकन्दर शाह लोधी ने किस प्रख्यात नगर का निर्माण किया ?

(उत्तर ६४ पृष्ठ में देखें)
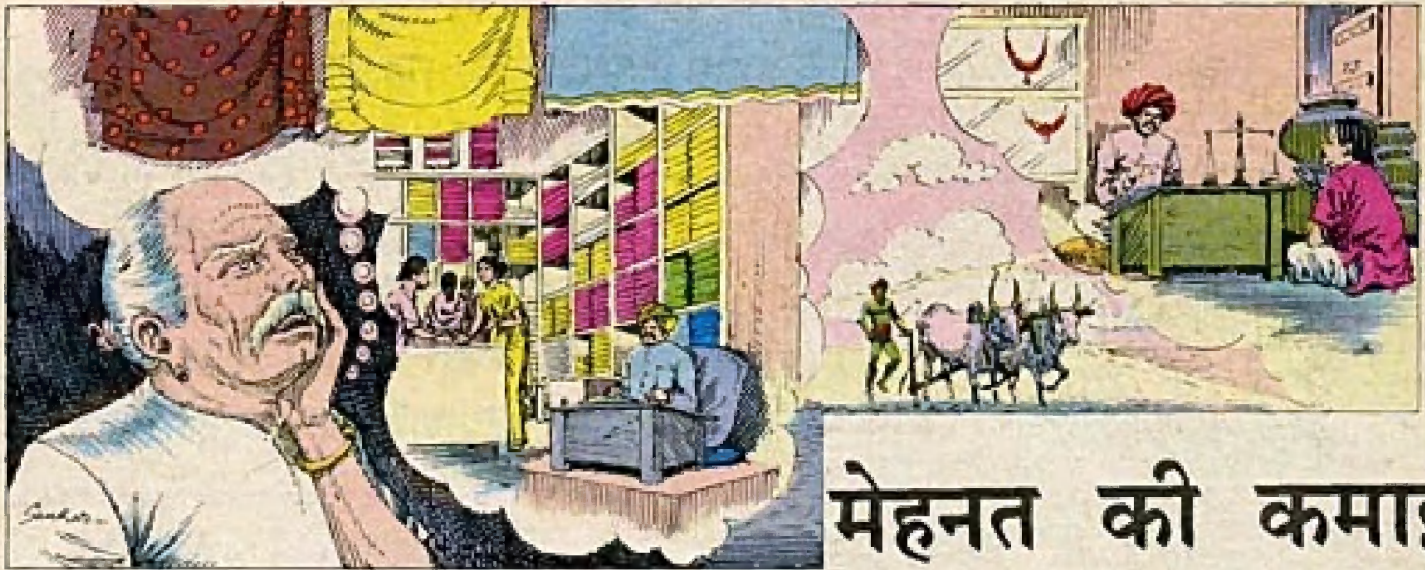
मेहनत की कमाई

जमुना प्रसाद ने बचपन से ही कड़ी मेहनत करके काफी धन कमाया, पर वह फ़िज़ूल खर्च नहीं करता था। सब कोई उस को किफ़ायात आदमी मानते थे।

अब जमुना प्रसाद साठ साल पार कर चुका था। फिर भी वह अपने सारे काम स्वयं कर लेता था, पर किसी काम के लिए दूसरे पर निर्भर नहीं रहता था। उस की पत्नी का भी यही हाल था, लेकिन उन के तीनों पुत्र अव्वल दर्जे के आलसी थे। वे कभी अपने पिता की बात मानते न थे।

जमुना प्रसाद के यहाँ बीस एकड़ जमीन थी। सिंचाई का भी अच्छा प्रबन्ध था। लेकिन बुढ़ापे की वज़ह से वह मजदूरों के साथ रह कर खेतीबाड़ी का काम देख नहीं पाता था, इसलिए उसने अपने पुत्रों की मदद मांगी। प्रति दिन खेत में हो आना जमुना प्रसाद के पुत्रों केलिए मुश्किल मालूम हुआ, इसलिए उन लोगों ने अपनी जमीन को उसी गाँव के किसी काश्तकार के हाथ सौंप दिया। काश्तकार खेत की पैदावर का बहुत सा हिस्सा खुद रख लेता, और जो मन में आता, थोड़ा-बहुत जमुना प्रसाद को दे देता था।

इसी प्रकार जमुना प्रसाद के यहाँ महाजनी, बजाजी अन्य व्यापार थे। उन को भी वह अकेला संभाल नहीं पाता था। इसलिए जब वह अपने महाजनी का व्यापार भी संभाल न पाया तो इस काम की देखभाल केलिए एक मुँशी को रख लिया। इसी तरह अपने बजाज का व्यापार भी किसी जान-पहचान के आदमी के हाथ सौंप दिया। वह जो कुछ लाभांश देता चुपचाप ले लेता था। यदि जमुना प्रसाद के तीनों पुत्र तीन काम संभाल लेते तो वह निश्चिन्त हो जाता। लेकिन वे फ़िज़ूल धन खर्च करने के सिवाय किसी दूसरे काम में दिलचस्पी नहीं रखते थे, फलतः जमुना प्रसाद की चिन्ता दिन
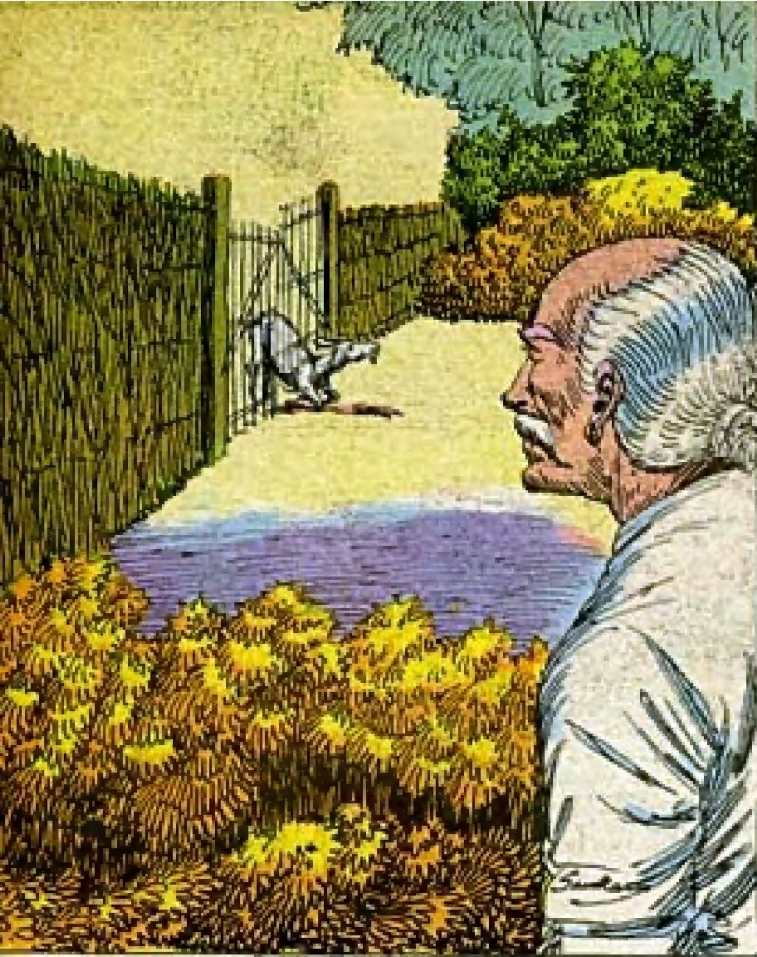
प्रति दिन बढ़ती ही गई ।

जमुना प्रसाद के मकान के चारों तरफ़ बहुत बड़ा अहाता था। जब से जमुना प्रसाद ने सारे काम छोड़ कर घर में आराम करना शुरू किया तब वह अपने इस अहाते में तरह-तरह की सब्जी व तरकारी के पौधे लगा कर बागवानी करने लगा। कुछ ही दिनों में मकान के चारों तरफ़ एक सुन्दर बाग तैयार हो गया ।

पौधों के लिए थाले बनाने या पानी सींचने में जमुना प्रसाद के पुत्र उस की बिलकुल मदद नहीं करते थे। उल्टे यह कह कर अपने पिता का मजाक़ उड़ाते हुए आपस में हंस देते थे कि इस बुढापे में ये कमाने की लत से बच नहीं पा रहे हैं ।

जमुना प्रसाद को बागवानी में भी अच्छी-खासी आमदनी होने लगी। उसमें पैदा होने वाली तरकारियाँ, सब्जी व फूल मिनटों में बिक जाते थे। लेकिन अप्रत्याचित रूप में उस के सामने एक कठिनाई उपस्थित हुई ।

जमुना प्रसाद के पड़ोस में सोमनाथ नामक एक नया किरायेदार आकर जम गया। वह दूध का व्यापार करता था । उस के यहां बीस-पच्चीस बकरियाँ थीं । वह बकरियों को क्या खिलाता था, किसी को कुछ पता नहीं था, पर उनकी आँख जमुना प्रसाद के बगीचे पर पड़ गई। प्रति दिन किसी न किसी वक्त वे बकरियां जमुना प्रसाद के बाग पर हमला कर देतीं, उसे सफ़ा चट करके चली जातीं। जमुना प्रसाद ने जिस बाग की अपने प्राणों के समान देखभाल की, उस का सर्व नाश होते वह देख न पाया। इसलिए उसने अपने पुत्रों को बुला कर बारी-बारी से बाग का पहरा देने को गिड़गिड़ाया पर पुत्रों ने उसकी बात की कोई परवाह नहीं की।

अब विवश होकर जमुना प्रसाद ने बाग के चारों तरफ़ बाड़ी बन्धवाई, उसमें भी कहीं न कहीं छेद करके रोज बकरियाँ बाग में घुस आती थीं।फिर बकरियों के हमले से बचने केलिए जमुना प्रसाद ने बाड़ी के चारों तरफ़ कांटों की बाड़ी लगवा दी और बगीचे के द्वार पर सुरक्षा केलिए लकड़ी का किवाड़ लगवाया।

यह उपाय भी कुछ ही दिन कारगुजार हुआ। चालाक बकरियों ने बड़ी युक्ति के साथ अपने सींगों से लकड़ी के द्वार को खोलने का

उपाय निकाला ।

अन्त में विवश होकर जमुना प्रसाद ने पड़ोसी सोमनाथ को अपनी मुसीबत सुनाई और पूछा— "भाई साहब, तुम किसी तरह से अपनी बकरियों पर क़ाबू रखो । तुम्हारी बकरियाँ रोज मेरे बगीचे में घुस कर सर्वनाश कर रही हैं। मैं उसके बचाव के लिए सारे प्रयत्न करके हार गया हूँ ।"

"वाह, यह भी खूब है ! तुम्हारे तीन पुत्र हैं। वे तीनों जब मेरी बकरियों पर क़ाबू नहीं रख पाये तो भला मैं अकेला कहाँ तक क़ाबू रख सकता हूँ। सच्ची बात तो यह है कि इस गाँव में आज तक तुम को छोड़ कर और किसी आदमी ने मेरी बकरियों की वजह से मुसीबत नहीं उठाई ।" सोमनाथ ने साफ़ कह दिया ।

जमुना प्रसाद को लगा कि सोमनाथ की बातों में सचाई है ! फिर क्या था, इस ने अपनी तरफ़ से बाग के बचाव के लिए कोई उपाय करने का निश्चय किया। काफी सोच-विचार के बाद उसे एक उपाय सूझा। तब इसने बगीचे के फाटक के पास तीन गज की दूरी तक एक गड्ढेके दोनों तरफ सड़क की ऊँचाई के बराबर मेंडें बनाई । फिर गड्ढे को ढँकते हुए गोलाकृति के लोहे के पाइप लगाये। गोलाकृति के लोहे के पाइपों पर बकरी के पैर नहीं जमते। इसलिए वे भले ही लकड़ी के द्वारों को खोल दे, पर बाग में प्रवेश नहीं कर सकती थीं ।

कुछ दिन बीत गये। जमुना प्रसाद को लगा कि अब बकरियों का पिण्ड छूट गया है । लेकिन एक दिन एक बकरी लोहे के पाइप पर पैर रखे बिना तीन गज की दूरी को लांघने की कोशिश करके पाइयों पर गिर पड़ी और उठ नहीं पाई । बकरी की हालित पर रहम खाकर जमुना प्रसाद उसको उठा ले गया और बाहर छोड़ आया ।

पर बकरी ने उस पर रहम नहीं दिखाई । उसने बराबर दो-तीन दिन तक इसी प्रकार कोशिश की और आखिर वह एक दिन बगीचे के अन्दर कूदने में सफल हो गई ।

बकरी बगीचे के पौधों को चर रही थी। उस वक्त जमुना प्रसाद उस ओर आ निकला । बकरी को पौधे चरते देख कर भी वह चुप रह

गया क्यों कि वह बगीचे के बचाव के लिए सारे प्रयत्न करके हार गया था । और वह निराश होकर उसी जगह खड़ा-खड़ा निर्विकार भाव से देखता ही रह गया ।

इतने में जमुना प्रसाद के तीनों पुत्र वहाँ पर पहुँचे, उन लोगों ने आश्चर्य में आकर पूछा— "बाबूजी, आप के प्राण समान बाग को बकरी चर रही है । इसे देख कर भी आप चुप क्यों हैं ? क्या आपकी सारी मेहनत को वृथा देखकर आप उदास हो गये हैं ?"

जमुना प्रसाद सिर हिलाकर थोड़ी देर मौन रहा, फिर बोला— "अरे, चरने दो ! मैं ने यह बाग इसीके वास्ते लगाया है ! इस से मेरे सारे पाप धुल जायेंगे, साथ ही मैं थोड़ा पुण्य भी लूट पाऊँगा ।"

तीनों पुत्रों ने चकित होकर पूछा— "आप यह क्या कह रहे हैं बाबूजी ! आप की बातें हमारी समझ में नहीं आ रही हैं !"

"अपने आहार के वास्ते यह बकरी तीन गज की दूरी लांघ आई है । किसी तरह के काम न आनेवाले आलसियों को पाल-पोस कर मैं जिस पाप का भागीदार बना, वह इस मेहनतकश बकरी पर रहम खाने से धुल जाएगा । आज से मैं अपनी सारी जायदाद व संपत्ति उसीको देना चाहता हूँ जो ईमानदारी से मेहनत करता है ।" जमुनाप्रसाद ने अपने मन की बात बताई ।

जमुना प्रसाद के पुत्र यह बात समझ कर लज्जित हो गये कि अपना आहार प्राप्त करने केलिए बकरी जो मेहनत करती है उतनी भी मेहनत वे लोग अपने खाने के वास्ते नहीं कर रहे हैं । फिर उन्होंने सोचा कि जैसे आज उनके पिता ने इस बकरी पर रहम दिखाई । इसी प्रकार वे भविष्य में किसी चोर या गरीबों के कष्ट देखकर रहम खाकर उन्हें अपनी सारी संपत्ति दान कर सकते हैं ।

अपने मन में इस प्रकार का डर पैदा होते ही वे लोग अपने आलसीपन को त्याग कर अपने पिता की इच्छानुसार उसके कामों में हाथ बंटाने लगे और इस तरह तीनों पुत्रों ने खुद मेहनत करके अपने पिता को प्रसन्न किया ।
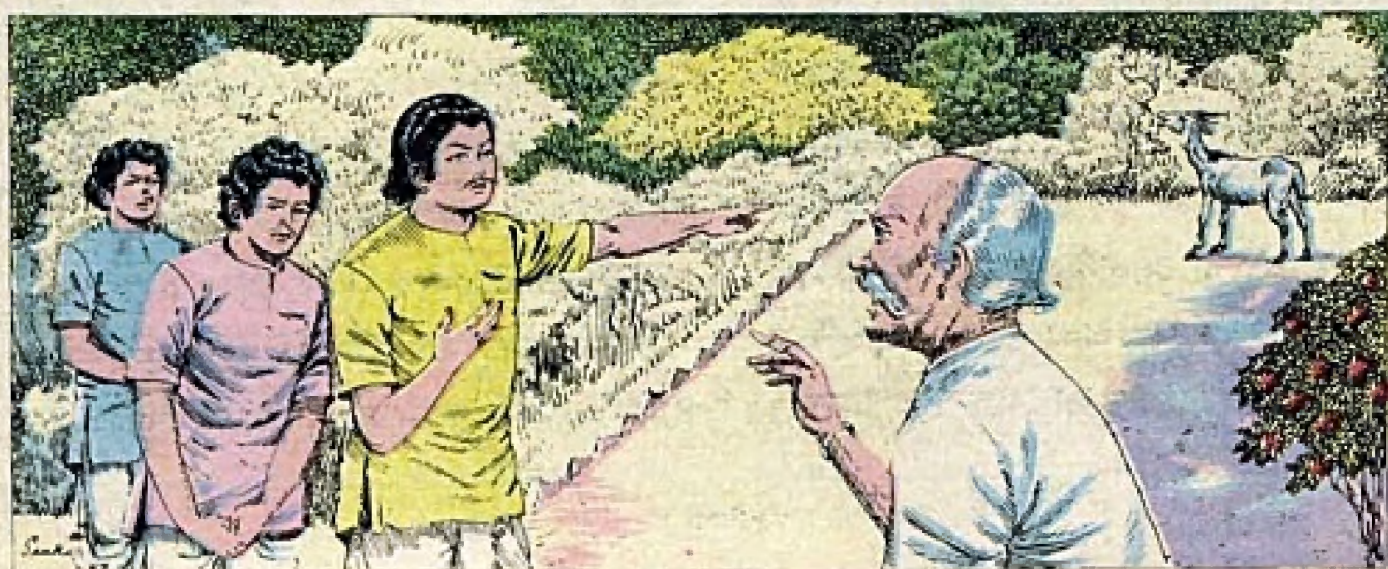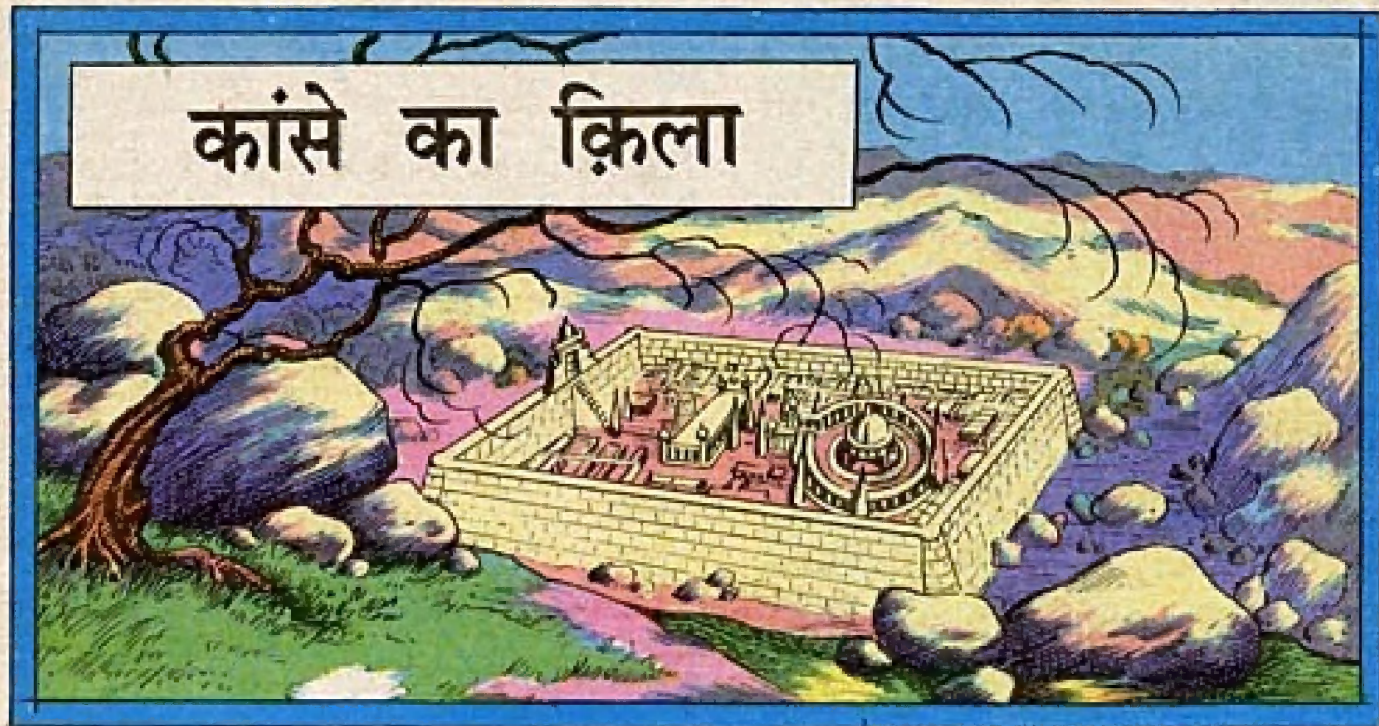
3

[सूर्यवर्मा की मृत्यु को देख कर सुबाहु नामक एक सेवक तुरन्त यह समाचार सूर्यवर्मा के पुत्र चंद्रवर्मा को देने केलिए घोड़े पर निकल पड़ा। रास्ते में उसके घोड़े को सर्पकेतु के अनुचरों ने मार डाला। इतने में मशाल लिये हुए कुछ ग्रामवासी उसे दिखाई दिये। इस बीच कुछ घुड़ सवारों ने 'अबे रुक जाओ' कह कर उसको घेर लिया बाद...]

सुबाहु पल भर केलिए निश्चेष्ट रह गया। वह यह सोच कर डर गया कि अब उसकी मौत निकट आ गई है ! अपने प्रभु का समाचार वीरपुर में देने के बाद उसके सामने ऐसा खतरा पैदा हो जाता तो वह बिलकुल इस की परवाह नहीं करता। पर इस हालत में उस की मौत वीरपुर राज्य केलिए भी विनाशकारी साबित हो सकती है। वह मन ही मन सोचने लगा, भगवान की कृपा से यदि वह इन घुड़ सवारों को चकमा देकर निकल जाय तो क्या ही अच्छा होगा !

"अबे, तुम कौन हो ! बोलते क्यों नहीं ?" यह कह कर एक घुड़ सवार उसके समीप आया और उसके केश पकड़ कर जोर से झकझोर दिया।

इतने में भीड़ में से एक ग्राम वासी सहानुभूति पूर्वक चिल्ला उठा— "बेचारे, उस भिखारी को मत सताइये। ऐसा मालूम होता है

कि भूख-प्यास से तड़पने के कारण उस की बोली भी बन्द हो गई है ।"

ये बातें सुनने पर सुबाहु भी थोड़ा आश्वस्त हुआ । उसके दिल में यह हिम्मत बन्ध गई कि भिखारी का स्वांग रचना कोई मुश्किल की बात नहीं है ।

"बाबूजी, रोटी का एक टुकड़ा दे दो !..." यह कह कर सुबाहु ने घुड़ सवार की आँखों में दीनता भरी दृष्टि दौड़ाई और घोड़े की लगाम को थाम लिया ।

"छीः छीः, यह कहाँ की झंझट है ! मैं ने सोचा था कि यह वीरपुर का कोई भेदिया होगा । पर यह कोई भिखमंगा मालूम होता है !" यह कह कर घुड़ सवार घोड़े को हांक लगा कर आगे निकल गया ।

"यह कैसा भेदिया है । लगता है कि इसके बदन में जान तक नहीं है ! इसके ये चीथड़े... और इस की यह बदसूरत ! कोई शनीचर सा लगता है ! अबे तुम अपने बदन को भी घसीट कर नहीं ले जा सकते, तिस पर हाथ में यह मजबूत लाठी क्यों लिये हुए हो ?" दूसरे घुड़ सवार ने उस का मजाक़ उड़ाया ।

"हुजूर, पहाड़ों में रहने वाले चीते और भेड़ियों को डराने केलिए !" सुबाहु ने झट जवाब दिया ।

सुबाहु के मुँह से यह जवाब सुनकर घुड़ सवारों के साथ भीड़ में से भी कुछ लोग ठहाके मार कर हंस पड़े ! कुछ लोगों ने उस का परिहास करते हुए कहा— "अरे तुम भी कैसे शिकारी हो ! तुम धरती पर मजबूती के साथ क़दम टिका कर एक क़दम भी आगे बढ़ाने की ताक़त नहीं रखते ! वाह रे वाह ! ऐसी हालत में तुम चीतों और भेड़ियों को कैसे डरा सकते हो ?"

"सरकार, मुझे एक रोटी दे दो । फिर मैं अपना पराक्रम दिखाऊँगा । इधर एक हफ़्ते से मैं पानी पीकर अपनी जान बचा रहा हूँ ।" सुबाहु ने कहा ।

इसके बाद घुड़ सवारों ने इस की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया । घुड़सवारों के सरदार ने अपने घोड़े पर एड़ लगा कर कहा— "तुम

लोगों को शीघ्र राक्षस टीले के पास पहुँचना होगा। वहाँ पर तुम लोगों को आवश्यक हथियार दिये जायेंगे। प्रातः काल तक वीरपुर को हमारे कब्बे में लेना होगा।" फिर उसने उच्च स्वर में नारा लगाया— "महाराजा सर्प केतु की जय!" फिर क्या था, सब ने उसके स्वर में स्वर मिलाकर सर्पकेतु की जयकार की, तब उस के पीछे सभी घुड़ सवार चल पड़े।

घुड़ सवारों के चले जाने के बाद भीड़ में से कुछ लोग सुबाहु के समीप पहुँचे और उसको घेर लिया। उन में से एक ने जिज्ञासा भरे स्वर में पूछा— "अरे भाई, तुम देखने में जवान लगते हो! तुम्हारे हाथ-पैर भी ठीक चलते हैं। ऐसी हालत में दर-दर घूम कर तुम्हें भीख मांगने की नौबत क्यों आई?"

वही रहस्य जानने के लिए मैं इधर पांच वर्षों से इस पहाड़ पर बसने वाले एक गुरुजी की सेवा-टहल करता आ रहा हूँ। पर आज तक मुझ पर उनका अनुग्रह नहीं हुआ है। एक घंटा पहले वे मुझ पर प्रसन्न हो गये और मशाल लिये हुए आप लोगों की ओर इशारा करके बोले— "आज प्रातः काल तक तुम को सताने वाले शनीचर का पिण्ड छूट जाएगा और तुम्हारे पीछे जो लोग आयेंगे, वे भी शनीचर के पिण्ड से मुक्त हो जायेंगे। इसलिए, लो, देखो, सामने जो मशाल दीख रहे हैं, वहाँ पर पहुँच जाओ।" यों उन्होंने मुझे आदेश दिया है। इसीलिए मैं

जलदी-जल्दी पहाड़ से उतर कर आप लोगों के पास आ गया हूँ।" सुबाहु ने कहा।

सुबाहु के मुँह से ये बातें सुन कर चारों तरफ़ से उसको घेरे हुए लोग पल भर केलिए चकित रह गये। उनके मुँह से बोल तक नहीं फूटे! फिर थोड़ी ही देर में संभल कर बोले— "जमाने से हम लोग भी उस महा पुरुष के बारे में तरह-तरह की बातें सुनते आ रहे हैं, लेकिन उन को आज तक किसी ने नहीं देखा। आज सवेरा होने के पहले हम लोग वीरपुर पर क़ब्जा करके उसको लूटने जा रहे हैं। वे महापुरुष दिव्य दृष्टि रखते हैं, इसलिए उनको पहले ही यह सारा समाचार मालूम हुआ होगा! अब हमारी विजय निश्चित है! चलो, जल्दी हम

निकल पड़ेंगे ।"

इस बीच कुछ लोग वहाँ से गाँव की ओर दौड़ पड़े और थोड़ी देर में सुबाहु के वास्ते फल और रोटियाँ ले आये । सुबाहु ने संतुष्टि के साथ अपना पेट भर लिया । इस के बाद कुछ लोगों ने उसके सामने नये वस्त्र रख कर बताया कि वह अपने फटे-पुराने व चीथड़े वस्त्र खोल कर नये वस्त्र धारण कर ले । पर सुबाहु के मन में यह शंका पैदा हुई कि नये वस्त्र धारण करने पर भीड़ में से कोई जान-पहचान का व्यक्ति हो तो उस को पहचान सकता है ! इस विचार से उसने जनता के प्रति स्नेह भरी दृष्टि दौड़ा कर कहा— "मित्रो, मैं आप लोगों की कृपा के लिए अत्यन्त कृतज्ञ हूँ ! लेकिन बात यह है कि इस वक्त मैं ये नये वस्त्र धारण कर लूँ तो गुरुजी की आज्ञा का उल्लंघन करने वाला साबित हो जाऊँगा । मेरे शरीर के भीतर प्रवेश करके जो शनीचर मुझ को सता रहा है, आज सूर्योदय के पूर्व उसका पिण्ड छूट जा एगा । इसके बाद मैं ये नये वस्त्र धारण करूँगा ।"

सुबाहु के उत्तर से सन्तुष्ट होकर कुछ लोग "जय..." कह कर नारे लगाने लगे । उन नारों से सारी दिशाएँ गूँज उठीं । इतने में कुछ लोगों ने सुबाहु की ओर मुड़ कर पूछा— "तुमने अपना नाम नहीं बताया, क्या हम तुम्हारा नाम जान सकते हैं ?"

"मेरा नाम... मेरा नाम... ।" कहते सुबाहु हकबका कर बोला— "माता-पिता ने जो नाम दिया है, उस से इस वक्त मतलब ही क्या है ! आज तक मैं शनीचर का शिकार हो, उसके

द्वारा सताया जा रहा हूँ ! गुरुजी के आदेशानुसार उस से पिण्ड छूटने पर..." यह उत्तर देकर सुबाहु आगे कुछ कहने ही वाला था, इतने में जनता में से एक आदमी तपाक से बोल पड़ा— "आज हम सब का शनीचर से पिण्ड छूट जाएगा ! इसलिए आज से तुम्हारा नाम 'शनि मर्दन' होगा ।" उसी क्षण शनि मर्दन की जय के नारों से सारा आकाश गूंज उठा ।

इसके बाद सब लोग मशालों की रोशनी में रास्ता पहचानते हुए राक्षस टीले की ओर बढ़ चले । सुबाहु के साथ चलने वाले लोगों की बात चीत से उसने समझ लिया कि ये सब निरे दरिद्र हैं और सर्पकेतु ने उन्हें धन और धान्य का लोभ दिखाया है, इसी लालच से प्रेरित होकर ये सब देहाती लोग वीरपुर की ओर चल रहे हैं ।

"मैं वीरपुर के बारे में सही जानकारी नहीं रखता । क्या वीरपुर का सामन्त राजा सूर्यवर्मा जनता का शोषक है ?" सुबाहु ने भीड़ में से एक आदमी से पूछा ।

यह सवाल सुन कर एक ग्रामवासी हंस पड़ा और बोला— "इन सामन्त राजाओं में ऐसा कौन सच्चा व्यक्ति है जो जनता का शोषण नहीं करता हो । वैसे हम लोग सूर्यवर्मा के बारे में अधिक नहीं जानते, लेकिन सर्पकेतु से बढ़ कर जनता का शोषण करने वाला व्यक्ति इस संसार में आज तक कोई पैदा नहीं हुआ है और न पैदा होगा ।"

"तब तो वीरपुर को लूटने के लिए हमें क्यों जाना है ? ऐसा करने पर हम सर्पकेतु की मदद करने वाले साबित हो जायेंगे न ?" सुबाहु ने

फाड़ कर समझाने पर भी कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। उनकी दृष्टि में उन पर शासन करने वाले सारे सामन्त एक ही चट्टे-बट्टे के हैं! जब भी मौका मिले,और लोग उनको लूटते हैं और इसी प्रकार उन्हें भी जब मौका मिले तो दूसरों को लूटने में उस का फ़ायदा उठाना चाहिए। यही देहातियों की नीति है!

थोड़ी देर बाद सब लोग राक्षस टीले के पास पहुँचे। तब तक वहाँ पर सैकड़ों लोग इकट्ठे हो चुके थे। उन में से अधिकांश लोगों के हाथों में जलते हुए मशाल थे। उन सब को कुछ सैनिक क़तारों में खड़ा कर रहे थे। सुबाहु वाले दल को भी एक जगह खड़ा कर दिया गया।

इसके बाद दल नायक की पोशाकें धारण किये हुए अश्विक आगे आये और वहाँ पर इकट्ठी हुई जनता को सम्बोधित कर बोले—

"अत्यन्त शक्तिशाली और दयालू राजा सर्पकेतु की मदद पाकर आप लोग आज से दरिद्रता के चंगुल से मुक्त होने वाले हैं। लेकिन अब हमारी समस्या यह है कि वीरपुर नगर में कैसे प्रवेश किया जाय! नगर के द्वारपालों को दगा देकर एक साथ द्वार खुलवा दें तो फिर नगर के भीतर हम को कोई भी ताक़त रोक नहीं सकती। इसलिए आप लोगों में से एक सौ लोग पहले ही नगर-द्वारों के पास पहुँच जाइये। तब हाहाकार मचाते हुए इस प्रकार आर्तनाद

पूछा।

इस बीच उन की बातचीत से आकृष्ट होकर चार-पांच और लोगों ने आकर चस्का लेना शुरू किया। सुबाहु का सवाल सुनकर वे खिलखिला कर हंस पड़े और बोले— "दर असल बात यह है कि हम सर्पकेतु की मदद करने केलिए नहीं जा रहे हैं। उसने वीरपुर को लूटने में हमारी मदद करने का वचन दिया है। हम वहाँ से जो कुछ लूट लायेंगे, वह सारी संपत्ति हमारी हो जाएगी। उसमें सर्पकेतु या उसके अनुचरों के लिए बिलकुल हिस्सा न होगा।"

सुबाहु ने समझ लिया कि भोलापन और लालच के शिकार हुए इन देहातियों को गला

कीजिए, मानो राजा सर्पकेतु के सैनिक आप के गाँवों पर हमला करके लूट रहे हो ! आप लोगों के आर्तनाद सुन कर द्वारपाल नगर के द्वार खोल देंगे। तब नागरिकों के वेष में रहने वाले हमारे सैनिक आप लोगों के पीछे नगर में घुस जायेंगे।

तब मौक़ा देख कर आप लोग बगल की ओर हट जाइये। फिर उन के पीछे प्रवेश करके आप लोग मन माने ढंग से नगर को लूटिये। साथ ही नारे लगाते जाइए— "महाराजा यशोवर्द्धन की जय !" ये नारे सुन कर सूर्यवर्मा के कुछ सैनिक इस भ्रम में आ जायेंगे कि आप लोग महाराजा यशोवर्द्धन के समर्थक हैं और आप का सामना करने से पीछे हट जायेंगे। बाकी लोगों को नागरिक पोशाक में धारण किये हुए हमारे सैनिक खतम कर डालेंगे। लेकिन याद रखिये कि आप लोग किसी भी हालत में महाराजा सर्पकेतु का नाम न ले।"

दल नायकों की बातें समाप्त न हो पाई थीं, इस बीच भीड़ में से ये नारे सुनाई दिये—

"महाराजा यशोवर्द्धन की जय !" सुबाहु को जब इस बात का पता चला कि वीरपुर पर क़ब्जा करने के लिए इतना सारा षड़यंत्र रचाया जा रहा है, तब वह विस्मय में आ गया। फिर वह अपने मन में सोचने लगा— वह इन लोगों से बच कर पहले ही वीरपुर में प्रवेश करके चंद्रवर्मा को इस षड़यंत्र का पता दे सके तो इस ख़तरे से उनको और नगर को भी बचा सकता
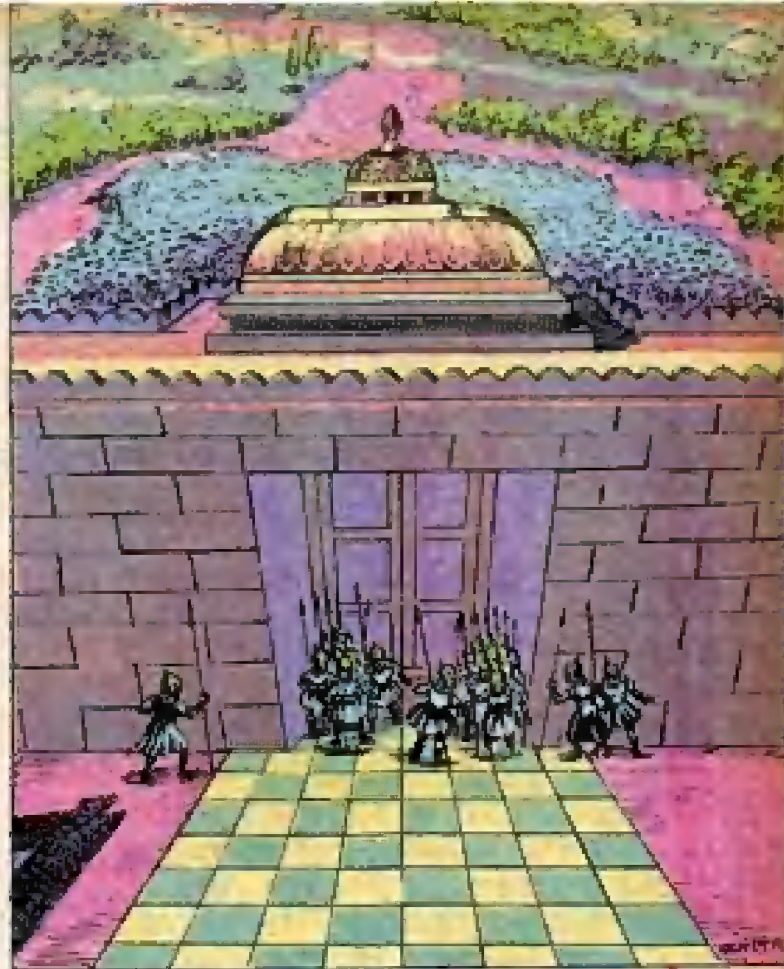
है। परन्तु इन लोगों की नज़र से बच कर नगर की ओर कैसे चला जाये ? यही सवाल उसके सामना था !

सुबाहु यों सोच ही रहा था कि जनता एक महा प्रवाह की भांति आगे बढ़ी। सुबाहु आसानी से पहचान सका कि उन में से अनेक लोग नागरिक पोशकें धारण किये हुए सर्पकेतु के सैनिक हैं। सब से आगे तेज गति से दौड़ने वाले एक सौ लोगों के बीच सुबाहु भी घुस गया। देखते-देखते वे लोग नगर के द्वारों के समीप पहुँचे। तुरन्त जनता में कुछ लोग विलाप करने वालों की भांति पुकार उठे— "महाशयो, द्वार खोलिये। सर्पकेतु के सैनिक हमारे गाँवों पर हमला करके हमारे सर्वस्व को लूट रहे हैं

और जनता को नाना प्रकार से सता रहे हैं। राजा की तरफ़ से हमें तत्काल सैनिकों की सहायता चाहिए ।"

नगर के द्वारपाल यह निश्चय न कर पाये कि नगर के द्वार खोले या नहीं, इस बीच जनता में से कुछ लोग भयकंपित हो जाने का नाटक रच कर बोले, "महाशयो, हम लोग महाराजा सूर्यवर्मा की शरण में आये हुए हैं ! हमें खुद उनसे बिनती करने का मौक़ा दीजिए ।"

यह पुकार सुनने की देरी थी कि नगर के द्वार खुल गये । तब तक बाहर प्रतीक्षा करने वाले लोग बगल की ओर हट गये । मौक़ा पाकर नागरिक पोशाक धारण किये हुए सर्पकेतु के सैनिक अपने छिपाये गये हथियारों को बाहर निकाल कर पहरेदारों पर टूट पड़े । कुछ लोगों का वध करके बाक़ी लोगों को बन्दी बनाया । जनता कोलाहल करते हुए आगे बढ़ी ।

सुबाहु एक ही छलांग में द्वार को पार करके लड़ने वाले द्वारपालों के पार्श्व में आगे कूद पड़ा । उसी समय पीछे से चिल्लाहटें और तालियों के बजाने की गड़गड़ाहट सुनाई दी । "वह कौन आगे आगे भाग रहा है ! सब लोगों को इकट्ठे आगे बढ़ना चाहिए । उसको पकड़ लो ।"

दूसरे ही क्षण में सर्पकेतु के सैनिक "रुक जाओ ! रुक जाओ" चिल्लाते हुए उसके पीछे हो लिये ।

सुबाहु ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि अब उसे अपनी मृत्यु से बचाव का फ़ैसला करने का वक्त आ गया है । फिर झट वह पीछे मुड़ गया और उसके निकट आये हुए सैनिक की बगल में जोर से लात मार दी ! मार खाकर जब वह पीछे की ओर गिर गया, तब सुबाहु ने उसके हाथ की तलवार को खींच लिया । इतने में एक और सैनिक उसके समीप आया । सुबाहु ने उसकी छाती में अपनी तलवार भोंक डाली और इस बीच और कई सैनिकों को उसकी ओर बढ़ते देख कर झट तेज गति से सुबाहु पीछे मुड़ गया और राज महल की ओर दौड़ने लगा ।

(क्रमशः)
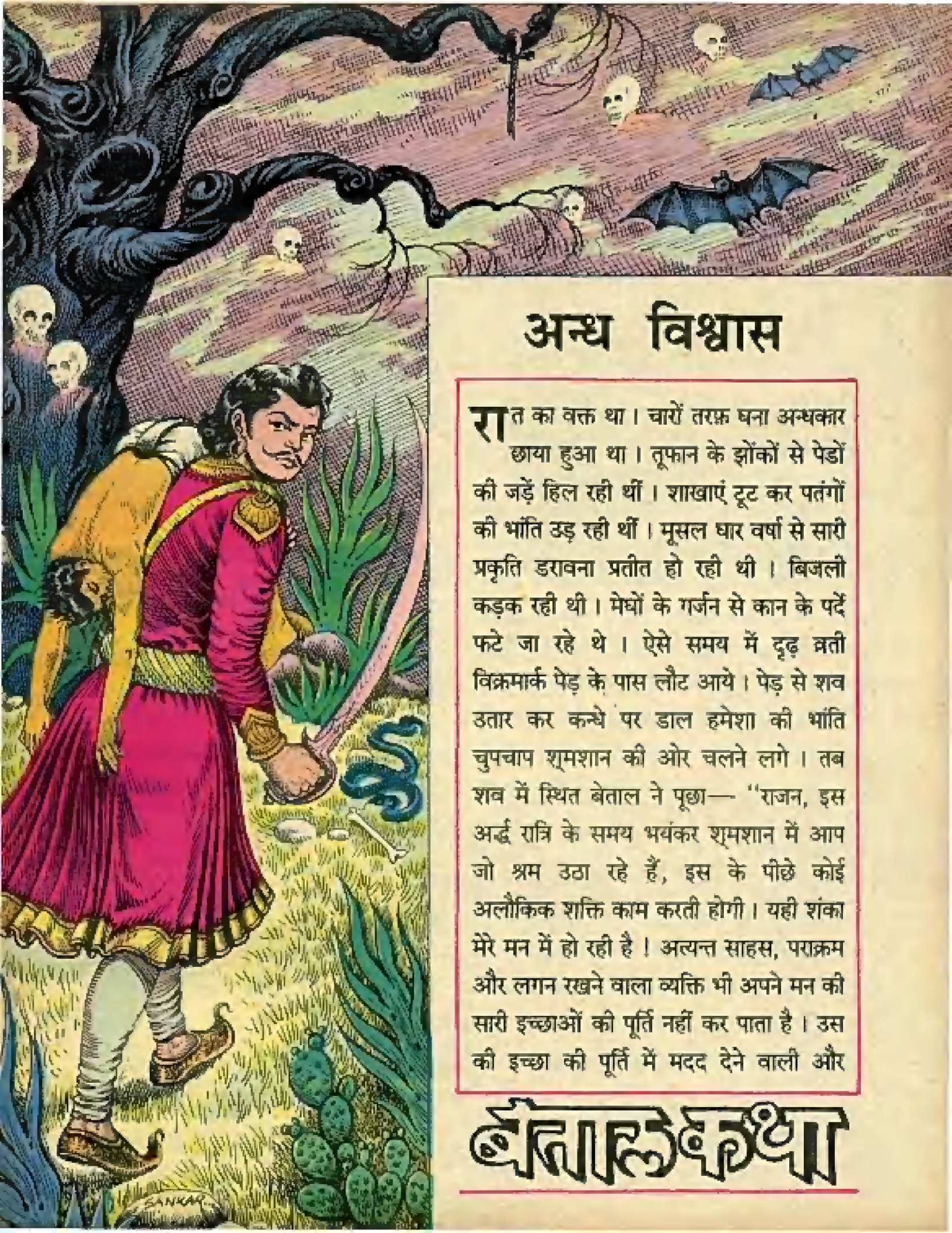
अन्ध विश्वास

रात का वक्त था। चारों तरफ़ घना अन्धकार छाया हुआ था। तूफान के झोंकों से पेड़ों की जड़ें हिल रही थीं। शाखाएं टूट कर पतंगों की भांति उड़ रही थीं। मूसल धार वर्षा से सारी प्रकृति डरावना प्रतीत हो रही थी। बिजली कड़क रही थी। मेघों के गर्जन से कान के पर्दे फटे जा रहे थे। ऐसे समय में दृढ़ व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ से शव उतार कर कन्धे पर डाल हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में स्थित बेताल ने पूछा— "राजन, इस अर्द्ध रात्रि के समय भयंकर श्मशान में आप जो श्रम उठा रहे हैं, इस के पीछे कोई अलौकिक शक्ति काम करती होगी। यही शंका मेरे मन में हो रही है! अत्यन्त साहस, पराक्रम और लगन रखने वाला व्यक्ति भी अपने मन की सारी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाता है। उस की इच्छा की पूर्ति में मदद देने वाली और

बेताल कथा

उनकी राह में विघ्न डालने वाली कुछ बाहरी शक्तियाँ भी होती हैं ! इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को लक्ष्मीधर नामक एक समुद्री व्यापारी की कहानी सुना देता हूँ। आप अपने श्रम को भूलने के लिए उस की कहानी सुन लीजिए !"

बेताल यह कह कर एक कहानी सुनाने लगाः लक्ष्मीधर नामक व्यापारी भारी पूंजी लगाकर विदेशों में अपने जहाजों के द्वारा माल भेजा करता था। इस व्यापार में उसने लाखों स्वर्णमुद्राएँ कमा लीं। लेकिन एक बार संयोग से इस व्यापार में उसे भारी नुक़सान हुआ। समुद्री डाकू उस के जहाजों पर हमला करके सारा माल लूट ले गये।

यह समाचार मिलते ही लक्ष्मीधर का एक मित्र उसे सांत्वना देने आया और थोड़ी देर तक उस की उंगलियों की ओर निर्निमेष देखता रहा, तब पूछा— "दोस्त, तुमने मूँगा जड़ी यह अंगूठी कब बनवाई है !"

"मैं ने हाल ही में यह अंगूठी बनवा ली है। लेकिन बात क्या है ! मुझे ऐसा लगता है कि तुम किसी ख़ास उद्देश्य से यह प्रश्न पूछ रहे हो ?" लक्ष्मीधर ने कहा।

"यह बताओ, तुमने इस उद्देश्य से तो नहीं बनवाई कि इस के धारण करने से तुम्हारी क़िस्मत खुल जाएगी ? या यों ही कुछ अच्छा लगा तो बनवा ली ?" दोस्त ने पूछा।

"मैं ने इस ख्याल से नहीं बनवाई कि इस के धारण करने से मेरा कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध हो सकता है। वैसे ही मुझ को मूँगा अच्छा लगा और मैंने अंगूठी बनवा ली ! इस हालत में तुम्हें मुझको हिम्मत बन्धवाना चाहिए था, पर इसके बदले में तुम मुझ से ये सवाल क्यों करते हो ?" लक्ष्मीधर ने कहा।

"इस रत्न के प्रभाव के कारण ही तुम अपने व्यापार में नुक़सान उठा रहे हो ! यह बात तुम अच्छी तरह से याद रखो। जानते हो, धनी व संपन्न परिवार के लोग अपनी अंगूठियों में रत्न क्यों जड़वा लेते हैं ? इन रत्नों का प्रभाव विलक्षण होता है। वैसे विभिन्न प्रकार के रंगवाले, नौ प्रकार के रत्न होते हैं। इन रत्नों का चुनाव अपने जन्म-नक्षत्र व जन्म कुण्डली के

अनुसार किसी योग्य ज्योतिष के द्वारा करवा कर तब अपनी अंगूठी में जड़वाना चाहिए।" यह कह कर लक्ष्मीधर का मित्र वहाँ से चला गया।

मित्र के मुँह से ये बातें सुनने के बाद लक्ष्मी धर के मन में सचमुच संदेह घर कर गया। उसने अपने परिचित कुछ बुज़ुर्गों से मिलकर मूंगे के बारे में पूछ-ताछ की। उन सब ने एक स्वर में यही उत्तर दिया— "लक्ष्मीधर, एक एक व्यक्ति केलिए एक प्रकार का रत्न भाग्य दायक होता है। यह सर्व विदित है।"

अब लक्ष्मीधर का सन्देह भय में बदल गया। पड़ोसी गाँव में आभूषणों में जड़ने के लिए क़ीमती रत्न बेचने वाला सोमशेखर नामक एक व्यापारी था। वह पहले ही यह जानकारी प्राप्त करके कि किस को कौन सा रत्न चमका सकता है, बेचा करता था। यह समाचार जान कर लक्ष्मीधर उससे मिलने गया।

सोमशेखर ने लक्ष्मीधर की बातें शांति पूर्वक सुन लीं, तब अंगूठी में जड़े मूंगे को किसी औजार से बड़ी कुशलता पूर्वक निकाला और पार्श्व में रखी रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। इस के बाद उसने लक्ष्मीधर के नाम-नक्षत्र आदि विवरण पूछा, उंगलियों से गुन कर बगल में रखी हुई एक छोटी सी मंजूषा का ढक्कन खोल दिया।

मंजूषा से नीले रंग का एक रत्न निकाला, उसे लक्ष्मीधर की अंगूठी में बड़ी कुशलता से जड़ कर उसके हाथ दे दी। तब बोला— "यह
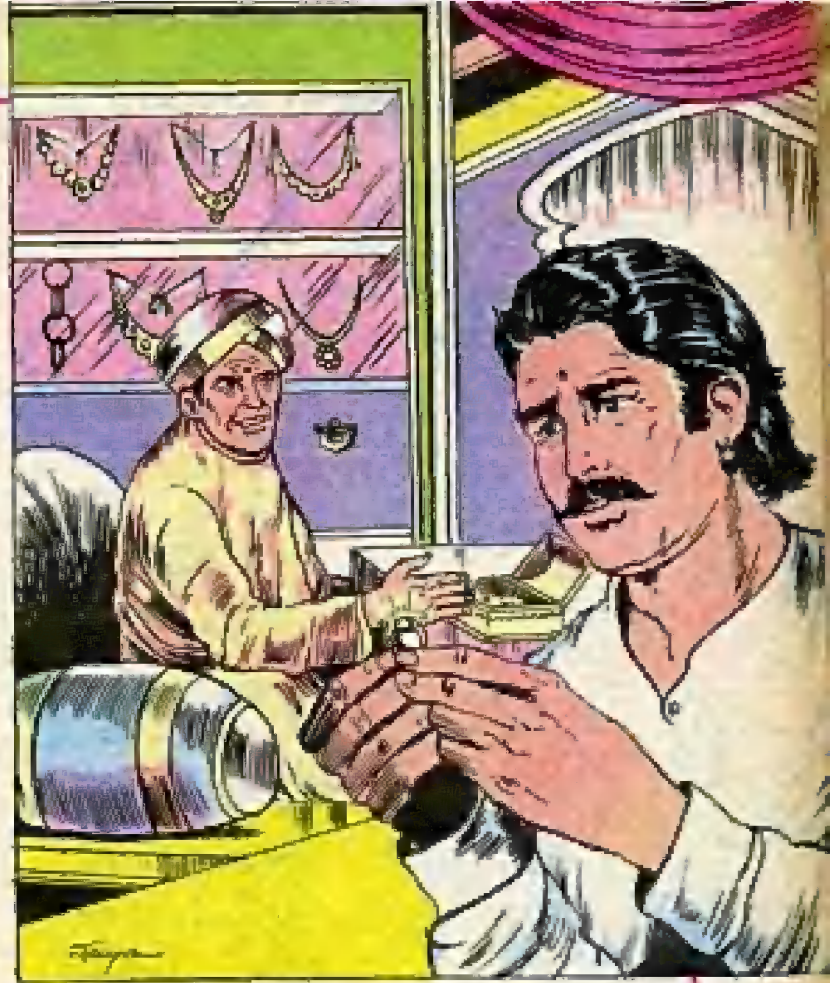
उत्तम किस्म का रत्न है। इस को आप हमेशा धारण कर सकते हैं! इस का प्रभाव आप को धीरे धीरे मालूम हो जाएगा। इस का मूल्य भी ज्यादा है। आप की बातों से मुझे मालूम हुआ कि व्यापार में आप को भारी नुक़सान हुआ है। इसीलिए मैं इस को लागत दाम पर याने सिर्फ़ एक हज़ार स्वर्ण मुद्राओं में बेच रहा हूँ।"

लक्ष्मीधर चुपचाप एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएं सोमशेखर के हाथ में सौंप कर अपने घर लौट गया।

थोड़े दिन बाद लक्ष्मीधर सोमशेखर की दूकान में पहुँचा। उस को देखते ही सोमशेखर ने पूछा— "बताइये, नील रत्न का प्रभाव आप पर कैसा है!"

"मैं ने आप को जो नीला रत्न दिया था, उसके प्रभाव से आपका हित ही हुआ है। इस बात पर आप ध्यान नहीं दे रहे हैं। चार जहाजों में से तीन उस भयंकर तूफ़ान के थपेड़ों को सह कर सुरक्षित किनारे लग गये हैं तो इस का क्या मतलब है। बात साफ़ है, नील रत्न के प्रभाव के कारण ही! वरना चारों जहाज डूब जाते और आप अब तक भिखारी बन गये होते!" सोमशेखर ने समझाया।

इस पर लक्ष्मीधर ने चुपचाप अंगूठी निकाल कर सोमशेखर के हाथ दे दी और अपने घर की राह ली। बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा— "राजन, अंगूठी में जड़े रत्न ने लक्ष्मीधर के तीन जहाजों को समुद्र में डूबने से बचाया है। यह बात सोमशेखर ने लक्ष्मीधर को स्पष्ट बतला दी। फिर भी लगता है कि लक्ष्मीधर ने उस की बातों को समझने की कोशिश नहीं की। इस कारण से भविष्य में उसे समुद्री व्यापार में भारी नुक़सान होने की संभावना है। लक्ष्मीधर ने केवल अपने अज्ञानवश ही सोमशेखर के हाथ में अपनी अंगूठी दी है न? इस सन्देह का समाधान जान कर भी नहीं बतायेंगे तो आप का सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

"मुझ पर उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। फिर से मुझे भारी नुक़सान हुआ है।" लक्ष्मीधर ने उत्तर दिया।

"साफ़-साफ़ बताइये, किस रूप में और कितना नुक़सान हुआ?" सोमशेखर ने पूछा।

लक्ष्मीधर उदास होकर बोला— "क्या बताऊँ। मैं ने माल भर कर जो चार जहाज भेजे थे, उन में से एक तूफ़ान में फंस कर डूब गया है। नुक़सान का हिसाब लगावे तो लगभग पचास लाख मुद्राओं का होगा।"

इस पर सोमशेखर मुस्कुराकर बोला— "इस का मतलब है कि शेष तीन जहाज सुरक्षित किनारे लग गये हैं, यही है न?"

"जी हां।" लक्ष्मीधर ने कहा।

इस पर विक्रमार्क बोले— "लक्ष्मीधर ने शौक़ से पहले मूंगा जड़ित अंगूठी बनवा ली। इस वक्त वह यह नहीं जानता था कि कई लोग विश्वास करते हैं कि अंगूठी में जड़ित रत्न का

अपना कोई प्रभाव होता है। पर उन रत्नों के अन्दर किन्हीं अलौकिक शक्तियों का प्रभाव आरोपित कर लक्ष्मीधर के मन में उस के मित्र ने विश्वास पैदा किया। समुद्र के भीतर तूफानों का उठना सहज है। यह भी स्वाभाविक है कि उस समय समुद्र में यात्रा करनेवाले कुछ जहाज तूफानों के बवण्डर में फंस कर डूब जाते हैं और कुछ जहाज उस के झोंकों को सहकर सुरक्षित किनारे लग जाते हैं।

पर सोमशेखर अत्यन्त समझदार जौहरी है, वह अच्छी तरह से यह बात जानता था कि अंगूठी में जड़ने वाले रत्नों के प्रभाव पर विश्वास रखने वाले ही उस की दूकान में कदम रखते हैं। उस विश्वास को वह अपने तर्क और चालाकी से बल प्रदान करता है। उसने लक्ष्मीधर के मन में यह विश्वास बैठाने का प्रयत्न किया कि तूफानों में फंसे चार जहाजों में से तीन रत्न के प्रभाव से ही सुरक्षित किनारे लग गये हैं। इस पर लक्ष्मीधर को जौहरी के कुतर्क का पता लग गया। भविष्य में कभी अपने सारे जहाजों के डूब जाने की बात बता दे तो वह यह कह कर उसके द्वारा एक और वर्ण का रत्न खरीदवा सकता है कि काल-प्रवाह में नील रत्न का प्रभाव जाता रहा है। असली बात तो उस वक्त शुरू हुई जब उसने मूँगा जड़ित अंगूठी धारण की। उस के आधार पर उसके मित्र ने उस के मन में एक अन्ध विश्वास का बीज बो दिया। किसी कारण से जब मनुष्य के भीतर आत्म विश्वास नष्ट हो जाता है, तभी वह अन्ध विश्वासों का शिकार हो जाता है। उसके द्वारा मनुष्य का सर्वनाश होने की संभावना है। यदि वह इस प्रकार के अन्ध विश्वासों को तिलांजलि न दे तो उसे और अनेक प्रकार के अनर्थों का शिकार होना पड़ेगा। ये ही बातें विचार करके लक्ष्मीधर ने वह अंगूठी सोमशेखर के हाथ दे दी। लेकिन अपने अज्ञान के कारण उसने ऐसा नहीं किया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो कर पुनः पेड़ पर चढ़ गया। (कल्पित)

व्यवहार-कुशलता

भद्रशील नामक कथा वाचक गाँवों में भ्रमण करते हुए सत्य तथा धर्म के बारे में सरल भाषा और बोली में जनता को उपदेश दिया करता था। उसके यहाँ कंकण और लोहक नामक दो शिष्य रहा करते थे। बुढ़ापे की वजह से भद्रशील अकसर बीमारियों का शिकार हो जाया करता था। बीमारी की हालत में भाषण देने का काम वह कंकण को सौंप दिया करता था।

लोहक के मन में यह बात हमेशा खटकती थी कि उस का गुरु भद्रशील एक बार भी उस को भाषण देने का मौक़ा नहीं देता है! बल्कि कंकण को ही बराबर मौक़ा दिया करता है।

एक दिन उसने भद्रशील से पूछा— "गुरुजी, आप ने एक बार भी मुझ को जनता के बीच अपने धर्मशास्त्र संबन्धी ज्ञान का परिचय देने के लिए भाषण देने का मौक़ा नहीं दिया। इसका मतलब यही हो सकता है कि धर्मशास्त्र सम्बन्धी मेरा ज्ञान या तो अपूर्ण है अथवा आपकी सेवा-टहल में मेरी कोई त्रुटि है। या कंकण के प्रति आप के दिल में पक्षपात का भाव होगा। कृपया बताइये, ताकि मैं अपनी गलती को सुधार सकूँ!"

भद्रशील ने मंद हास करते हुए कहा— "मुझ से छिपा नहीं है कि तुम धर्मशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान कहाँ तक रखते हो? सच्ची बात यह है कि तुम कंकण से भी कहीं ज़्यादा जानकारी रखते हो!"

गुरु के मुँह से यह उत्तर सुन कर लोहक को बड़ी खुशी हुई। भद्रशील थोड़ी देर रुक कर बोला, "साधारण जनता के दिल में बैठने लायक़ सरल शैली में हमें धर्मशास्त्र सम्बन्धी बातें बतानी होंगी! वरना वे उनके उल्टे अर्थ निकाल कर हमारी इच्छा के विरुद्ध व्यवहार कर

राजेन्द्र

सकते हैं। मेरे विचार में तुम एक भाषणकर्ता से कहीं अधिक एक आलोचक और व्याख्याता के रूप में लोक प्रिय बन सकते हो। इसीलिए मैं ने आज तक तुम्हें यह मौक़ा नहीं दिया।"

लोहक खिन्न होकर बोला— "आचार्य वर, मुझ को एक बार भी मौक़ा दिये बिना आप ने मेरे सम्बन्ध में यह धारणा बना ली है। मैं इसे अपना दुर्भाग्य मानता हूँ।"

भद्रशील थोड़ी देर सोच कर बोला— "अच्छी बात है! तुम्हारे दिल में जो गलत फहमी है, उस को दूर करने केलिए मैं तुम्हें एक मौक़ा देता हूँ। आज रात को मुझे सिरिपुर के शिवाले में भाषण देना है। मेरे स्थान पर तुम से भाषण दिलाऊंगा। तुम इसके लिए तैयार हो जाओ।"

गुरु की बातें सुन कर लोहक बहुत प्रसन्न हुआ। उस दिन रात को वह अपने गुरु के साथ सिरिपुर पहुँचा और गाँव के शिवाले के प्रांगण में ग्रामवासियों के समक्ष खड़े होकर लोहक ने अपना भाषण शुरू किया— सर्वप्रथम उसने धन मूलं मिदंजगत, नामक सूत्र का अनेक उदाहरणों के द्वारा खण्डन किया।

उसने कहा— सुखपूर्वक जीने के लिए धन प्रधान नहीं है, इस बात के समर्थन में भी उसने कई उदाहरण दिये। एक घंटा बीत गया। उसका भाषण चालू था। उस की बातों से प्रेक्षक ही नहीं बल्कि भद्रशील भी ऊब गये थे।

थोड़ी देर बाद लोहक पल भर चुप रहा, फिर लोगों को सम्बोधित कर बोला— "अब

तक आप सब भली भांति समझ गये होंगे कि केवल धन के बल पर हम सब चीज़ें खरीद नहीं सकते ।"

"हाँ, हाँ ! हम खूब समझ गये हैं !" यह कह कर भाषण को बन्द करने के तर्ज से वहाँ पर उपस्थित सब लोगों ने तालियां बजाना शुरू किया ।

पर लोहक ने उसपर ध्यान दिये बिना दुगुना उत्साह में आकर भाषण जारी रखा— "क्या हम धन देकर आनन्द को खरीद सकते हैं ? मैत्री और प्रेम का मूल्यांकन कर सकते हैं ?" इसके बाद अगली पंक्ति में बैठे हुए एक लड़के को खड़े हो जाने को कहा और उससे पूछा— "बेटा, यदि मैं तुम को एक सौ सिक्के देकर तुम्हारे माता-पिता से घृणा करने केलिए कहूँ तो क्या तुम ऐसा करोगे ?"

यह प्रश्न सुनकर वह लड़का अचंभे में आ गया और इधर-उधर ताकने लगा । इतने में उसकी बगल में बैठा हुआ व्यक्ति खड़ा हुआ और पूछा— "मेरे मामा के साथ घृणा करने के लिए कहे, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है । इस के लिए आप मुझ को कितना धन देंगे ?"

सभी लोग ठहाके मारकर हंस पड़े और एक-एक करके उठकर जाने लगे । पर लोहक वहीं पर जड़वत् खड़ा रह गया ।

इस पर भद्रशील लोहक के कन्धे पर थपकी देकर बोला— "तुमने समझ लिया न कि आज तक मैं ने तुम को भाषण देने का मौक़ा क्यों नहीं दिया ? तुम अत्यधिक शास्त्र ज्ञान रखते हो, यह बात सही है । पर साथ ही तुम्हारा व्यवहार भी थका देने वाला है । तुम्हारे व्यवहार के बारे में मैं ने जो अन्दाजा लगाया है, इसमें कोई भूल नहीं है न ?"

लोहक अपने गुरु के प्रश्न का कोई उत्तर न दे सका, चुपचाप उसने स्वीकृति सूचक अपना सर झुका लिया । इसके बाद उसने फिर कभी भाषण देने का प्रयत्न नहीं किया, और न आचार्य पर जोर डाला । केवल धर्म-शास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थों केलिए व्याख्या लिख कर अच्छा नाम कमा लिया ।
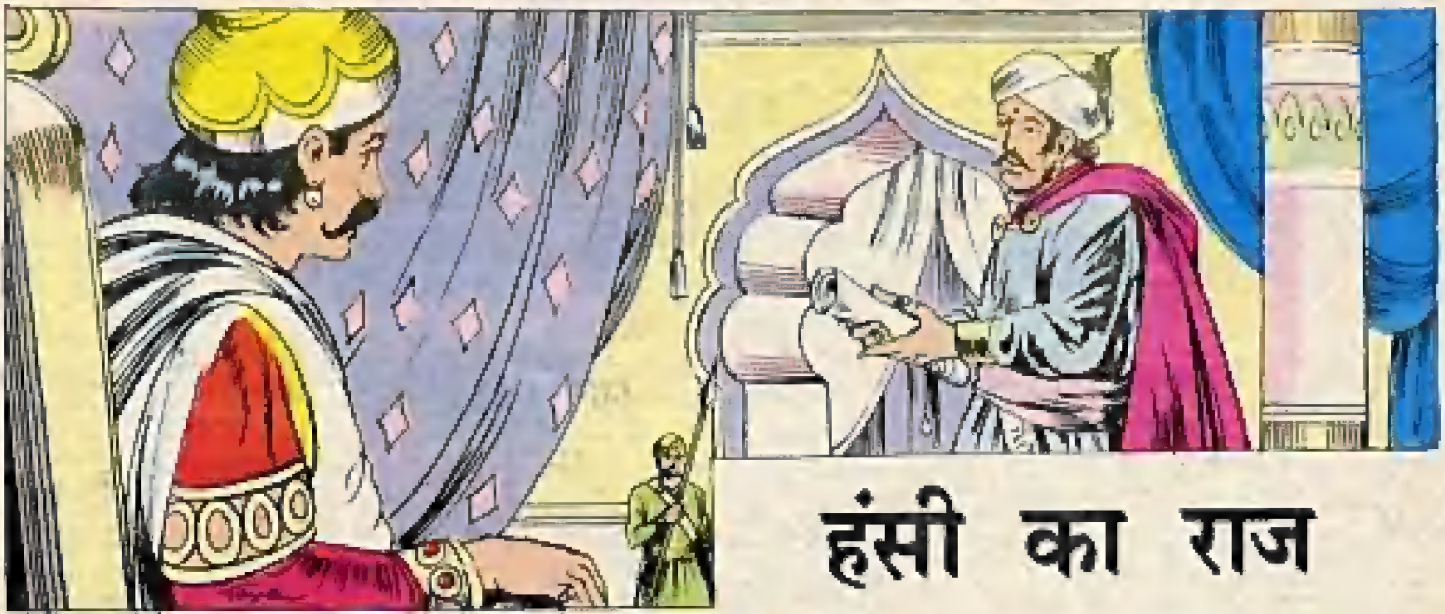
हंसी का राज

शिवपुरी और स्वर्णपुरी अड़ोस-पड़ोस के राज्य थे। दो-चार पीढ़ियों से उन के बीच वैमनस्य चला आ रहा था, लेकिन दोनों राज्य आर्थिक और सैनिक दृष्टि से समान रूप से शक्तिशाली थे।

धीरे-धीरे स्वर्णपुरी सैनिक दृष्टि से कमजोर हो गया। उस समय स्वर्णपुरी पर राजा विष्णुसेन राज्य कर रहे थे। उन्हों ने शिवपुरी से होने वाले युद्ध के खतरे के बारे में विचार किया।

शिवपुरी के राजा शिव सेन के एक युक्त वयस्क पुत्र था। विष्णुसेन के रत्नमंजरी नामक एक सुन्दर पुत्री थी। अपनी पुत्री का विवाह शिव सेन के पुत्र के साथ कर दे तो फिर कभी युद्ध का खतरा न होगा।

इस प्रकार विचार करके विष्णुसेन ने अपने दूतों के द्वारा शिवसेन के पास यह सन्देशा भेज दिया कि वह उसके साथ रिश्ता जोड़ना चाहते हैं। पर इस के पूर्व ही शिवसेन के पुत्र विजय ने रत्नमंजरी के अनुपम सौन्दर्य के बारे में सुन रखा था और वह रत्नमंजरी के साथ विवाह करना चाहता था। यह बात मालूम होने पर शिवसेन ने प्रसन्नता पूर्वक विष्णुसेन के सन्देशा को मान लिया।

विवाह के पूर्व सारी बातों पर विचार करने केलिए शिवसेन ने राजा विष्णुसेन को निमंत्रित किया और उनके सम्मान में दावत का प्रबन्ध किया। उस दावत में भाग लेने के लिए विष्णुसेन के साथ उन की पत्नी जयन्तीदेवी, पुत्री रत्नमंजरी भी आ गईं। परिचारिकाएँ दावत में पधारे हुए सभी लोगों को विविध प्रकार के व्यंजन परोस रही थीं। उस समय मालती नामक परिचारिका परोसते हुए खिल-खिला कर हंस पड़ी। उस हंसी को सुन कर सब लोग चौंक पड़े। प्रत्येक व्यक्ति के चौंकने के पीछे एक कारण था।

शिवसेन ने अपनी पत्नी से इस बात की

रघुनाथप्रसाद

शिवसेन के द्वारा होने वाले युद्ध के खतरे की शंका करके युद्ध में पराजित हो जाने के डर से यह राजा शिव सेन के साथ रिश्ता जोड़ रहे हैं- यह सोच कर परिचारिका ने हंस दिया होगा। यह विचार कर विष्णुसेन चौंक पड़ा और उनका चेहरा मुरझा गया।

विष्णुसेन की पत्नी जयन्तीदेवी अपने सफ़ेद बालों को छिपाने केलिए रोगन लगाया करती थी, पर उस दिन दावत में भाग लेने की जल्दबाजी में रोगन लगाने की बात भूल गई थी। इसलिए इस बात को भांप कर कहीं परिहास पूर्वक परिचारिका ने हंस दिया हो। यह सोच कर जयन्तीदेवी ने लज्जा के मारे सिर झुका लिया।

राजकुमारी रत्नमंजरी बराबर राज कुमार विजय की ओर तिरछी नज़र से देख रही थी, शायद परिचारिका ने इसे देख कर हंस दिया हो, यह सोच कर राजकुमारी चौंक पड़ी और उसने अपना सर घुमा लिया।

अब विजय के चौंकने का कारण कुछ और था। वह राजकुमारी के साथ एकांत में बात करने केलिए अपने मित्र के द्वारा ख़बर देना चाहता था। शायद यह बात भांप कर परिचारिका ने हंस दिया है— यही बात विचार कर विजय चौंक पड़ा।

राजा शिवसेन का मंत्री सुधर्म अत्यन्त सूक्ष्मग्राही था। उसने यह बात भांप ली कि मंत्रणा की थी कि विष्णुसेन से दहेज व उपहार के रूप में क्या क्या चीज़ें वसूल करनी है, इस लिए वह यह सोच कर चौंक पड़ा कि परिचारिका शायद यह सोच कर हंस पड़ी होगी— "इतनी सारी सम्पत्ति रखने वाले राजा के मन में और अधिक धन जोड़ने का लालच है। यह भी कैसे राजा हैं!"

शिवसेन की पत्नी शारदादेवी बातचीत के दौरान हकलाती है। इसलिए इस बात को छिपाने केलिए वह कन्या पक्ष की नारियों से अपने को दूर रखती रही। इसलिए वह यह सोच कर चौंक पड़ी कि कहीं इस बात को भांप कर परिचारिका हंस पड़ी हो!

विष्णुसेन का विचार कुछ और था—

दावत खाने पधारे हुए सभी लोगों के अन्दर अचानक परिवर्तन आ गया है । उसने सोचा कि परिचारिका मालती की खिल खिलाहट का अर्थ सब लोग अपने तहत कोई कारण समझ कर व्याकुल हो रहे हैं ।

थोड़ी देर में दावत समाप्त हुई । सुधर्म ने मालती को अपने निकट बुलाकर पूछा— "दावत के बीच तुम अचानक क्यों खिल खिला कर हंस पड़ी ? दर असल इसका कारण क्या है ?"

सब कोई यह सोचकर उस की ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाने लगे कि मालती उन्हीं के बारे में कुछ कहेगी । लेकिन मालती अपनी हंसी का कारण बताने में संकोच करने लगी ।

इस पर सुधर्म ने समझाया— "सुनो मालती, तुम्हारी हंसी का कारण यहाँ पर आये हुए सब लोग अपने तहत मान कर व्याकुल हो सकते हैं । मैं तो यही सोच रहा हूँ कि तुम अपने ही बारे में किसी बात की याद करके हंस पड़ी होगी ! क्यों कि हमें देख कर हंसने की हिम्मत एक परिचारिका नहीं कर सकती ! इस वक्त तुम्हें अपनी हंसी का कारण अवश्य बताना होगा !"

इस पर मालती लजाकर बोली— "मेरे पति बहुत ही भुलक्कड़ हैं । मैं उन को कई दिनों से बता रही हूँ कि मेरेलिए कांच की नई चूड़ियाँ ख़रीद लावे ! लेकिन वे बराबर भूलते जा रहे हैं । इसलिए आज उनको याद करने केलिए मैं ने इस बात की फिर याद दिलाई और अपनी पुरानी चूड़ियों को उनके एक हाथ में पहना दीं । लेकिन वे अपनी पुरानी आदत के कारण चूड़ियां खरीद लाने की बात भूल कर उन चूड़ियों के साथ ऐसे ही अन्तःपुर का पहरा देने केलिए चले आये हैं ! इसे देख कर मैं अपनी हंसी को रोक नहीं पाई ।" यह जवाब देकर मालती ने पहरेदार मल्लवर्मा की ओर इशारा किया ।

मल्लवर्मा के हाथ में चूड़ियां देख सब लोगों ने परिचारिका की हँसी का कारण समझ लिया । इसपर सब लोगों की शंकाएँ दूर हो गईं और ठहाके मार कर एक साथ हंस पड़े ।
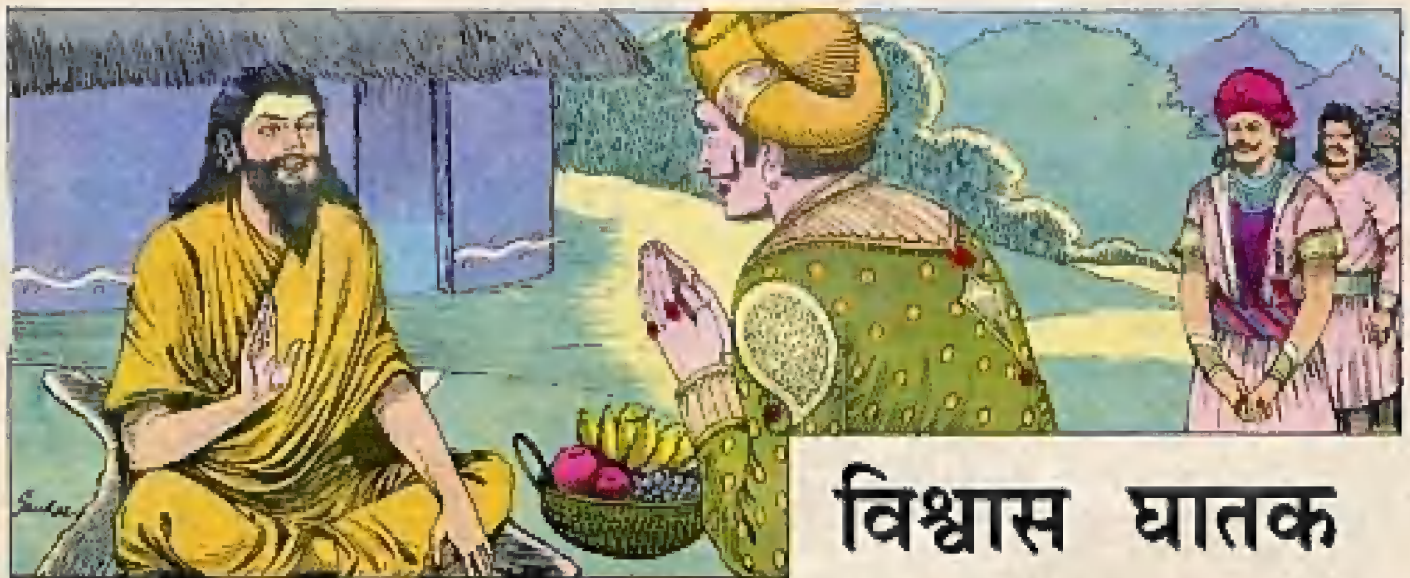
विश्वास घातक

काशी राज्य पर ब्रह्मदत्त राज्य करते थे। उन दिनों में पांच सौ व्यापारी दूसरे देशों के साथ व्यापार करने के लिए एक भारी नाव पर चल पड़े, लेकिन वह नाव समुद्र के बीच डूब गई। उन में एक आदमी को छोड़ कर बाकी सब लोग मछलियों का आहार बन गये। जो आदमी बच गया था, वह समुद्र के किनारे बसे करंबिया नामक नगर में पहुँचा और अपना पेट भरने के लिए कोई रास्ता न पाकर भीख मांगने लगा।

उसकी हालत पर रहम खाकर उस नगर के लोग उस को अनेक प्रकार की चीज़ें देने लगे। पर उसने उन चीज़ों को लेने से इनकार किया— "ये सब मेरे लिए किसलिए! मुझे तो सिर्फ़ खाना-कपड़ा चाहिए।"

इस पर जनता ने सोचा— "ओह, यह कोई महान बैरागी या तपस्वी होगा!" इस प्रकार विचार कर उस के वास्ते एक पर्ण कुटी बनवाई और उसे सलाह दी कि उस कुटी में निवास करते हुए तपस्या करें।

उस कुटी में रहते हुए उस बैरागी ने अपना नाम करंबिया महामुनि रख लिया और जनता के दिल में आदर प्राप्त कर लिया। उसकी यह लोकप्रियता का समाचार सुनकर राजा भी महामुनि के दर्शन करने आने लगे।

इस प्रकार करंबिया की मित्रता प्राप्त करने वालों में सर्पों का राजा पंडरक तथा गरुडों के राजा के रूप में जन्म धारण करने वाले बोधिसत्व भी थे।

एक दिन गरुड राजा ने आकर करंबिया को प्रणाम किया और उस के पार्श्व में बैठ कर कहा— "स्वामि, हमारे गरुडों तथा सर्पों के बीच जब जब युद्ध हुआ, तब तब सर्पों से अधिक गरुड ही मरते रहें, इस का मतलब

साफ है कि गरुड़ सर्पों को पकड़ने का तरीका नहीं जानते। उनको पकड़ने का रहस्य हम नहीं जानते। आप से हमारा यही निवेदन है कि आप सर्पों से यह रहस्य जानकर हमें बताने की कृपा करें।"

करंबिया ने गरुड राज की बात मान ली; तब गरुड़ राजा सन्तुष्ट होकर वहाँ से चला गया। इसके बाद जब सर्प राज करंबिया से मिलने आया, तब उसने पूछा— "सर्पराज, मैंने सुना है, गरुड जब तुम लोगों को पकड़ते हैं तब वे अधिक संख्या में मर जाते हैं। अखिर इसका कारण क्या है ? यह रहस्य बता दो-किस तरह तुम लोगों को पकड़ने से तुम लोग गरुड़ों के अधीन हो जाओगे।"

इस पर सर्प राज ने विनय पूर्वक उत्तर दिया— "स्वामि, इस में एक रहस्य छिपा हुआ है। यदि मैं यह रहस्य आप को बता दूँ तो मैं अपनी समस्त जाति के प्रति द्रोह करने वाला कारणभूत बन जाऊँगा और हमारे विनाश का रहस्य प्रकट करने वाला साबित हो जाऊँगा। इसलिए कृपया इस बात पर फिर से जोर न दीजियेगा।"

"क्या तुम मुझ पर शक करते हो कि यह रहस्य जान कर मैं गरुड़ जाति को बता दूँगा। यही है न ? ऐसा कभी न होगा। मैं केवल कौतूहल वश यह रहस्य जानना चाहता हूँ। मुझ पर यह रहस्य प्रकट करने पर किसी भी प्रकार

से तुम्हारी जाति का कोई अहित न होगा!" करंबिया ने कहा।

सर्पराज करंबिया को वह रहस्य बताने का वचन देकर वहाँ से चला गया। दूसरे दिन जब फिर सर्पराज करंबिया से मिलने आया तब करंबिया ने यह बात याद दिलाई, पर सर्पराज मौन रह गया। जब तीसरी बार सर्पराज करंबिया से मिलने आया तब उसने सर्पराज से पूछा— "मैं तुम से तीसरी बार वही सवाल करता हूं, फिर भी तुमने वह रहस्य नहीं बताया, कारण क्या है !"

सर्पराज ने सकुचाते हुए कहा— "महानुभाव, मुझे डर है कि आप हमारा यह रहस्य दूसरों पर प्रकट करेंगे।"

"मैं इस बात का तुम्हें वचन देता हूँ कि यह रहस्य मैं अन्य लोगों पर कभी प्रकट न करूँगा ।" करंबिया ने आश्वासन दिया ।

इस पर आश्वस्त हो कर सर्पराज ने उन का रहस्य खोल दिया— "महानुभाव, तब तो सुन लिजिए। हम बड़े-बड़े कंकड निगल कर हमारे शरीरों को भारी बना कर लेटे रहते हैं । गरुड जब हम पर हमला कर देते हैं, तब हम मुँह खोल कर उन का सामना करते हैं ! गरुड हमारे सर दबोच कर हवा में उड़ जाते हैं ! हमारे भारी शरीरों को ढोने के कारण उन के बदन का सारा पानी निकल आता है । इस वजह से वे मर जाते हैं । वे मूर्ख गरुड अगर हमारे सर दबोचने के बदले हमारी पूँछ पकड़ कर हवा में उड़ जाते हैं तो हमारे निगले हुए सारे कंकड़ मुँह के मार्ग से नीचे गिर जायेंगे और हमारे शरीर हल्के हो जायेंगे । ऐसी हालत में बड़ी आसानी से गरुड़ हम को उड़ा ले जा सकते हैं । यही हमारा रहस्य है । इस को न समझने के कारण ही गरुड़ हमेशा अपने प्रयत्न में असफल रहते हैं ।"

सर्पराज के चले जाने के बाद गरुड राज ने आकर करंबिया से पूछा— "महात्मा, क्या आपने सर्प राज से उनका रहस्य जान लिया है ?"

इस पर करंबिया ने सर्पों का रहस्य गरुड राज को बता दिया ।

"सर्पराज ने अपनी जाति के प्रति बड़ा अन्याय किया है । अपनी सारी जाति के विनाश का रहस्य खोल दिया है । मैं अभी जाकर उनको पकड़ लेता हूँ ।" यह कहकर गरुड राज ने अपने पंख फड़-फड़ाये, वहां से उड़ कर सर्प राज के पास पहुँचा और सर्पराज की पूँछ पकड़ कर आकाश में उड़ गया ।

औंधे मुँह लटकने वाले सर्प राज ने अपने निगले हुए कंकड़ों को उगल डाला, फिर चिन्तित होकर विलाप करने लगा— "उफ़ ! मैं ने अपने विनाश को स्वयं मोल लिया है ! उस दुष्ट को महा मुनि समझकर धोखे में आ गया और अपना रहस्य खोल दिया । इस से मेरी सारी जाति का विनाश होगा । मैं ने अपनी जाति के साथ द्रोह किया है ।"

इस पर गरुड राज बोला— "अरे मूर्ख, तुम अपना रहस्य उस कपट सन्यासी पर खोल कर विलाप क्यों करते हो ? मृत्यु सब केलिए अनिवार्य है। पर मानव का प्रधान धर्म विवेक है। तुम्हारी दुर्गति का कारण मैं नहीं हूँ और न सन्यासी ही है। बल्कि तुम्हारी मूर्खता है। प्रत्येक प्राणी के लिए उनके माता-पिता से बढ़कर प्रेम-पात्र कोई नहीं होते। ऐसे माता-पिता को भी तुम्हें तुम्हारा रहस्य बताना नहीं चाहिए। अनेक बन्धु व मित्र हो सकते हैं। सुन्दर पत्नी हो सकती है। उन सब पर भी तुम्हें तुम्हारा रहस्य प्रकट नहीं करना चाहिए। इस प्रकार अपने रहस्य को छिपा सकने वाला व्यक्ति ही अपने शत्रु को दूर रख सकता है।"

"महात्मा, मैंने आपके उपदेश को समझ लिया है। माँ अपने बच्चे के प्रति जैसा प्यार और वात्सल्य दिखाती है, वैसी करुणा आप मुझ पर दर्शाइये।" यों सर्प राज ने गरुड राज से प्रार्थना की।

"वैसे पुत्र तीन प्रकार के होते हैं— शिष्य, पालतू बच्चे और निजी बच्चे ! तुम मेरे शिष्य बन गये हो, इसलिए मेरे पुत्र हो गये हो ! इसीलिए मैं तुम्हारे प्राण बचा रहा हूँ।" यह कहकर गरुड़ राज ने सर्प राज को जमीन पर उतार दिया और अपने पंजे से उस को मुक्त कर दिया।

इसके बाद सर्पराज नाग लोक में चला गया। गरुड राज अपने लोक में जाकर गरुडों से बोला— "मैं ने सर्प राज पंडरक को अपना मित्र बना लिया है। लेकिन मैं इस बात की

परीक्षा लेना चाहता हूँ कि वह मेरे प्रति कैसा भाव रखता है ।"

यह कह कर नाग लोक में जाकर गरुड राज ने अपने पंख फड-फड़ाकर झंझावात पैदा कर दिया । दूसरे ही क्षण सर्प राज ने कंकड और बालू निगल डाला, पूँछ को छिपाकर गेंडुली बनाई, जमीन पर लेट कर मुँह खोल करके फुत्कारने लगा ।

इस पर गरुड राज बोला— "सर्पराज, यह तुम क्या कर रहे हो ? हमने तो मित्रता की सन्धि कर ली है । तुम मुझ को मारने की तैयारी क्यों कर रहे हो ?"

सर्पराज ने कहा— "दोस्त, विवेक शील व्यक्ति किसी पर विश्वास नहीं करता । तिस पर कल तक तुम मेरे शत्रु रहे, ऐसी हालत में मैं तुम पर कैसे विश्वास कर सकता हूँ ?"

गरुड राज हंस कर बोला— "तुम मेरा सबक़ मुझ को ही पढ़ा रहे हो ? चलो, हम उस कपट संन्यासी से मिलेंगे !"

इसके बाद दोनों मिल कर करंबिया की कुटी में पहुँचे । सर्पराज ने करंबिया से पूछा— "मैं ने तुम्हारी वेष-भूषा को देख महान तपस्वी समझा और तुम पर अपना रहस्य खोल दिया । उस रहस्य को गरुड राज पर खोल कर तुमने मेरे साथ विश्वासघात क्यों किया ?"

"मैं ने अज्ञान वश यह काम नहीं किया है ! तुम दोनों मेरे मित्र हो, लेकिन गरुड राज के प्रति मेरे दिल में स्नेह भाव अधिक है ! इसीलिए मैं ने तुम्हारा रहस्य गरुड़ राज पर खोल दिया है !" करंबिया ने उत्तर दिया ।

"अरे दुष्ट । तुम ने सर्वस्व को त्याग दिया है, फिर भी अपने मन में पक्षपात और शत्रुभाव रखते हो ! तुम भी कैसे मुनि कहला सकते हो? तुम सारे जगत को इस प्रकार धोखा दे रहे हो। इस अपराध में तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़ों में फट जाये !" इस प्रकार करंबिया को सर्प राज ने शाप दे डाला ।

फिर क्या था, दूसरे ही क्षण करंबिया का सर फट गया । उसके नीचे की भूमि फट गई, इस पर तपस्वी सीधे अवीची नरक में चला गया ।
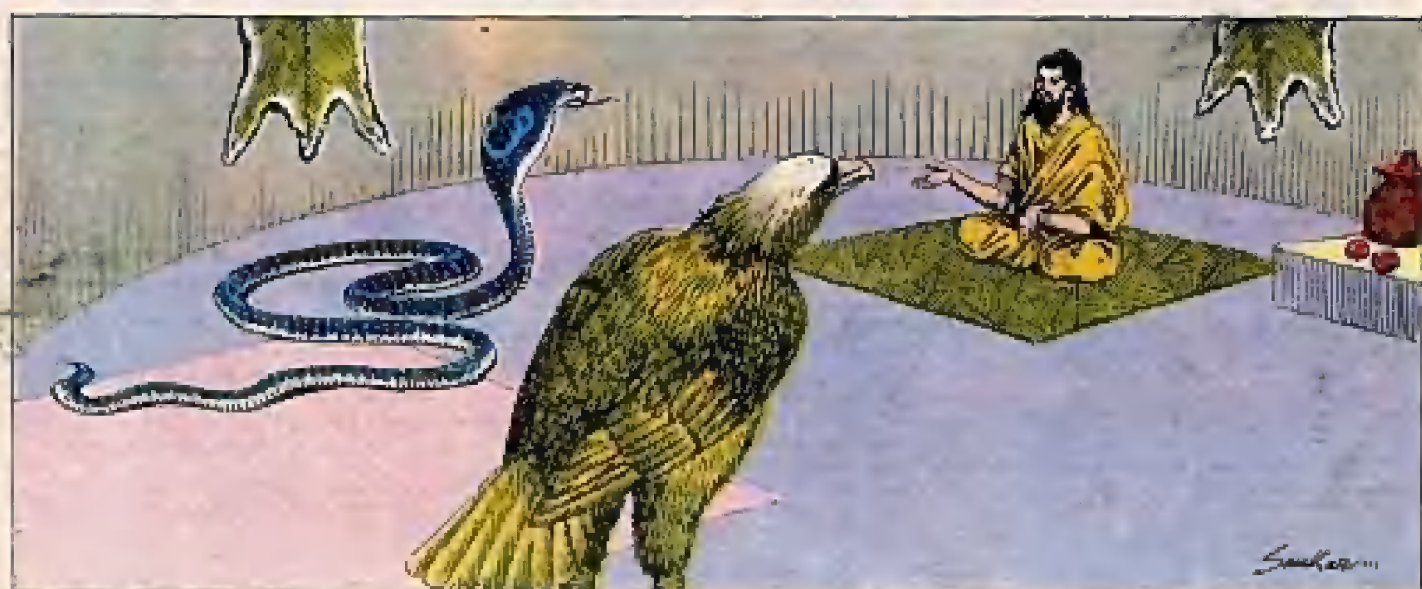
नर्मदा

नर्मदा नदी के जन्म से सम्बन्धित यह एक पुराण कथा है । मैकाल पर्वत प्रदेश अपूर्व प्राकृतिक सौंदर्य केलिए उद्गम स्थान है । उस के परिसर में मानवों का संचार नहीं होता था । अकसर वहाँ पर देवता और यक्ष जाया करते थे । प्रत्येक ऋतु में वहाँ की प्रकृति नई शोभा से भर उठती है ।
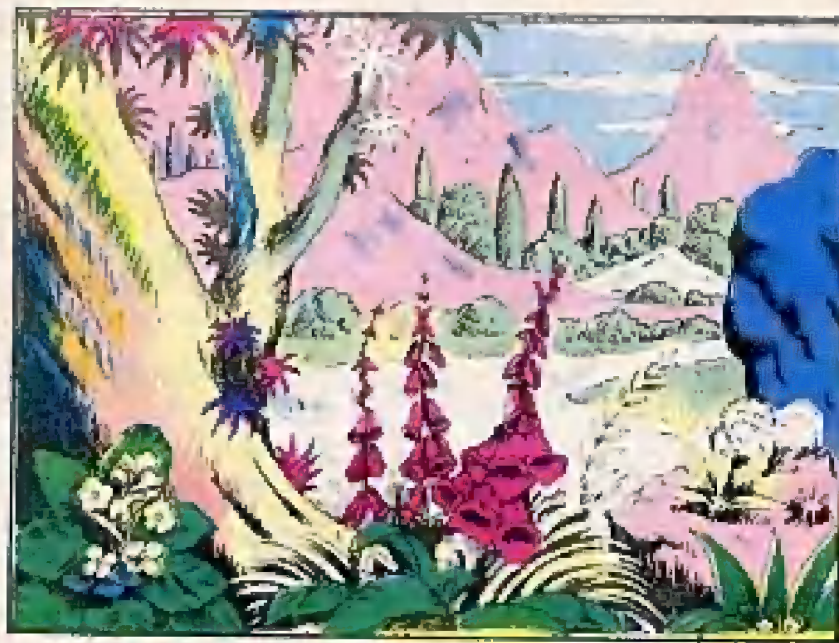
एक बार परम शिव उस पहाड़ पर पधारे । वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य पर मुग्ध हो वहीं पर बैठ कर ध्यान मग्न हो गये । कई साल बीत गये पर शिवजी वहाँ से हिले नहीं ! शिवजी के दिव्य स्वरूप को देख प्रकृति तन्मय हो उठी ।

परम शिव से उत्पन्न अद्भुत एवं दिव्य तेज ने अचानक सुन्दर कन्या का रूप धारण कर लिया । उसने शिवजी को प्रणाम करके प्रार्थना की— "पिताजी, मुझे सदा-सर्वदा स्वेच्छा के साथ आनन्दपूर्वक रहने का वरदान दीजिए !"

"तथास्तु !" कह कर शिवजी ने उस का नर्मदा (कोमल हृदया) नामकरण किया। उस समय से विविध पुष्प वनों से भरे उन पहाड़ों पर वनदेवी तथा मलय मारुत के रूप में नर्मदा स्वेच्छा एवं आनन्दपूर्वक विहार करने लगी।

हिरन, मोर आदि वन्य प्राणी नर्मदा के मित्र बने। उनके साथ हिल मिल कर आँख मिचौनी खेलते हुए वह अपना समय आनन्द पूर्वक बिताने लगी। उसके नृत्य-गीतों से उस रमणीय पर्वत प्रदेश की शोभा दुगुनी हो उठी।

उस प्रदेश में पधारे हुए देवता नर्मदा को देख उस के सौन्दर्य पर मुग्ध हो विस्मय में आ गये। जब वह वन्य प्राणियों के साथ खेलने लगती, तब वे लोग पहाड़ों की ओट में छिपकर उसकी ओर ताकने लगे। वह जहाँ भी जाती, देवता लुक-छिपकर उसके पीछे चलते और उस पर निगरानी रखने लगे।

थोड़े दिन बीत गये। अब देवता नर्मदा के साथ मैत्री स्थापित किये बिना रह नहीं सके। उसके द्वारा आकृष्ट होकर उसके समीप जाने लगे। फिर भी उनके साथ बातचीत करने तथा उनमें से किसी के साथ विवाह करने को नर्मदा को कतई पसन्द न था। उसने सदा स्वेच्छापूर्वक जीवन बिताने का निश्चय कर लिया।

देवता अब उस का पीछा करने लगे। फिर भी वह बिजली की कौंध की भांति उनके चंगुल से अपने को बचाने लगी। पर्वतों के एक छोर से दूसरे छोर तक देवताओं ने नर्मदा का पीछा किया-फिर भी वह उनके हाथों में पड़ने से अपने को बचाती आई।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन नर्मदा पर्वत की चोटी पर चढ़ गई। देवताओं ने सोचा कि अब वह वहाँ से अपने को नहीं बचा सकेगी। यह सोच कर वे लोग बड़े उत्साह के साथ आगे बढ़े। नर्मदा ने एक बार उनकी ओर दृष्टि दौड़ाई और फिर पर्वत के उस पार देखा। पल भर के लिए वह निश्चल खड़ी रह गई।

हठात् वह एक झरने के रूप में बदल कर पर्वत के उस पार से बहने लगी। देवता असहाय हो देखते ही रह गये। नर्मदा नदी के रूप में बदल कर पहाड़ों, घाटियों को पारकर मैदानों पर बहते हुए ब्रोच के पास समुद्र में जा मिली। नर्मदा नदी मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात से होकर बहती है।

प्राचीन काल से नर्मदा नदी अत्यन्त पवित्र मानी जाती है। उस नदी के तट पर ऋषियों ने तपस्या की है। भक्त नदी की परिक्रमा करते हैं। याने-नर्मदा नदी के जन्म स्थान अमर कंटक से एक मेंड़ पर से ब्रोच तक यात्रा करते हैं और वहाँ पर नदी को पार करके दूसरी मेंड पर से चल कर अमर कंटक को लौट आते हैं।
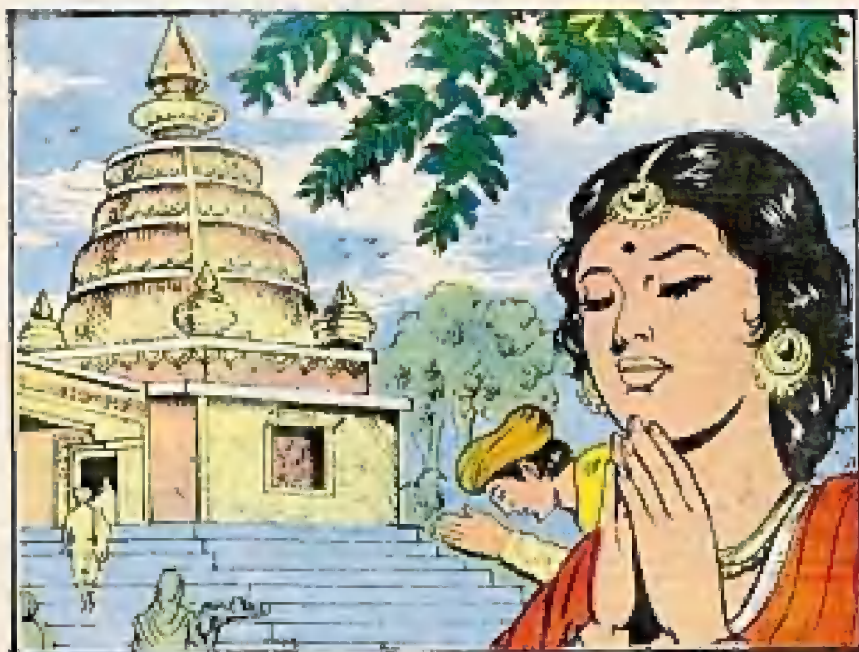
अमर कंटक के पास नर्मदा माई का मन्दिर है। हजारों की संख्या में भक्त उस मन्दिर के दर्शन के लिए आया करते हैं। क्रमशः वह एक महान यात्रा-स्थान के रूप में बदलता जा रहा है।

चन्दा वसूली

वीरपुर नामक गाँव में लक्ष्मीशंकर एक नामी साहूकार था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। गाँव में जब भी उसका प्रसंग छिड़ता, लोग उस को कंजूस लक्ष्मीशंकर कहा करते थे।

एक बार ग्रामवासियों ने अपने गाँव में एक सराय बनवाने का निश्चय किया और इस वास्ते सब से चन्दा वसूल करने लगे। पर किसी की समझ में यह बात न आई कि कंजूस लक्ष्मीशंकर से चन्दा कैसे वसूला जाय।

उस गाँव में हाल ही में आकर वहाँ पर अपना स्थाई निवास बनाने वाले परिवार में कामतानाथ एक युवक था। वह बड़ा ही समझदार और बातूनी भी था। किसी भी कार्य को साधने में वह अत्यन्त कुशल था। इस लिए ग्रामवासी उस को 'कार्य साधक' कह कर पुकारते थे।

एक दिन कामतानाथ दो युवकों को साथ लेकर कंजूस लक्ष्मीशंकर के घर पहुँचा और सारा हाल सुनाकर चन्दा मांगा।

लक्ष्मीशंकर ने उसकी ओर आश्चर्य पूर्ण दृष्टि दौड़ा कर कहा— "क्या कहा ? चन्दा मांगते हो ? तिस पर मुझ से ? आज तक मैं ने किसीको भी चन्दा नहीं दिया है। तुम से भी कहीं ज्यादा बुद्धिमान आकर मेरे घर से खाली हाथ लौट गये हैं !"

इसके उत्तरमें कामतानाथ मंदहास करके बोला— "महाशय, मैं उन लोगों जैसा मूर्ख नहीं हूँ। मुझ को सब लोग कार्य साधक कहते हैं। सामने वाले व्यक्तियों में थोड़ी सी भी बुद्धिमानी या समझदारी हो तो मैं उन से चन्दा वसूल कर सकता हूँ !"

फिर क्या था, कंजूस लक्ष्मी शंकर को चन्दा देना पड़ा।

चांदनी की सीढ़ी

विजय नगर पर श्री कृष्णदेवराय का शासन था। उस नगर में एक डाकू प्रति दिन एक एक घर में चोरी करने लगा। राजा ने उस को पकड़वाने के कई प्रयत्न किये, लेकिन उन्हें कोई सफलता नहीं मिली।

राज दरबार में तेनाली राम नामक एक कवि था। उसके मन में किसी प्रकार से चोर को पकड़ने की इच्छा पैदा हुई। वह हर चौक पर पहुँच कर यही बात दुहराने लगा— "मुझे डर है कि न मालूम वह डाकू कब आकर मेरे घर पर डाका डाले! मेरे घर में धन के ढेर लगे हुए हैं। इसी चिंता के मारे मेरी नींद तक हराम हो गई है।"

शीघ्र ही डाकू के कानों में यह बात पड़ी कि तेनाली राम के घर में बहुत सारी संपत्ति है, तेनाली राम का उद्देश्य भी यही था कि यह खबर डाकू के कानों में पहुँचे और वह उसके घर डाका डालने आ जाये।

डाकू जब उसके घर पहुँच जाय तब उन्हें क्या करना है और कैसी बातें करनी है, ये सारी बातें तेनाली राम ने पहले ही अपनी पत्नी को खूब समझाई थीं।

आखिर डाकू एक दिन तेनाली राम के घर आ धमका। तेनाली राम उस के इन्तजार में प्रति दिन देर तक जागा करता था। उसने अपने मकान की छत पर डाकू के चलने की आहट पा ली। तुरन्त उसने अपनी पत्नी को इशारा किया।

दूसरे क्षण तेनाली राम की पत्नी ने उच्च स्वर में कहना शुरू किया— "अजी, मुझ को डर लगता है, कहीं चोर हमारे घर भी आ जाये! क्या पता?"

"अरी, आ जाने दो! तुम इस की चिंता मत करो! अगर चोर हमारी यह संपत्ति चुरा ले जाये तो मैं इस से चौगुना धन तुम्हें ला दूँगा।"

२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

तेनाली राम ने कहा ।

"मैं भी रोज आप से पूछता चाहती हूँ और भूल जाती हूँ। अजी, आप यह सोना और रत्न कहाँ से ले आते हैं ?" तेनाली राम की पत्नी ने पूछा ।

"अरी, जोर से मत बोलो। मैं भी यह सारा धन चुरा कर ले आया हूँ !" तेनाली राम ने जवाब दिया

"कहाँ पर चोरी करते हैं ?" पत्नी ने फिर पूछा ।

"इस से तुम्हें क्या मतलब ? मैं ने सुना है, कि औरतों के पेट में बात पचती नहीं वे तुरन्त सारे रहस्य खोल देती हैं। तुम भी ऐसा करोगी तो मैं पकड़ा जाऊँगा और मुझे कारागार की सजा भुगतनी पड़ेगी। फिर तुम्हें पछताना पड़ेगा। इसलिए तुम ज्यादा बकवास मत करो, चुपचाप सो जाओ।" तेनाली राम ने कहा ।

"मुझ को पूरी बातें बता दीजिए, तभी मैं सो जाऊँगी ! क्या चोरी करते समय आप को कोई पकड़ न लेगा ? आप कैसे बच कर निकले आते हैं ?" पत्नी ने फिर पूछा ।

"साक्षात ब्रह्मा और रुद्र भी पृथ्वी पर उतर आ जाये, मुझ को पकड़ नहीं सकते ! मैं एक मंत्र जानता हूँ।" तेनाली राम ने कहा ।

"बताइये तो वह मंत्र क्या है ?" पत्नी ने पूछा ।

तेनाली राम ने अपनी पत्नी को डांटा,

आखिर खीज कर बोला— "तुमने शनीचर की तरह मुझको पकड़ लिया है। मैं अपना रहस्य तुम्हें बता देता हूँ ! राजमहल में खजाना है न। उस में दस हाथ ऊँचाई तक धन का ढेर लगा हुआ है। उस की छत के थोड़ा नीचे दीवार में एक आदमी के घुसने लायक़ झरोखा है। जानती हो, मैं क्या करता हूँ ? चांदनी की रातों में खजाने की छत पर पहुँच जाता हूँ। झरोखे में से खजाने के अन्दर चांदनी के फैलने तक इंतजार करता हूँ। तब ऊँभ्रांति ऊँभ्रांति, ऊँभ्रांति कह कर मंत्र जपता हूँ। उस मंत्र के जपते ही चांदनी की किरणें रस्सों जैसे बनकर मेरे हाथ में आ जाती हैं। तब उनके सहारे फिसल कर मैं खजाने के अन्दर उतर जाता हूँ। इसके बाद

बहुत सारा धन एक गठरी में बान्ध लेता हूँ। फिर किरणों के सहारे झरोखे में से होकर ऊपर चढ़ आता हूँ। इसलिए ब्रह्मा और रुद्र भी समझ नहीं पाते हैं कि खजाने में चोरी कैसे हो गई है ! इस प्रकार चांदनी की सीढ़ी के सहारे मैं खजाने को लूटता आ रहा हूँ। यही कारण है कि आज तक मुझ को कोई पकड़ नहीं पाया है।" तेनाली राम ने अपनी पत्नी को सारा रहस्य समझाया।

"ओह, ऐसी बात है !" यह कह कर तेनाली राम की पत्नी ने सन्तुष्ट होने का अभिनय करके आँखें मूँद लीं।

पति-पत्नी के बीच जो बातचीत हुई, उसको डाकू ने सुन लिया। अब उसके मन में साधारण चोरियाँ करने की इच्छा जाती रही, उसने निश्चय किया कि अगर लूटना ही है तो राजा का खजाना लूटना है।

दूसरे दिन रात को मकानों की छतों पर से रेंगते हुए डाकू राजा के खजाने की छत पर पहुँचा। तेनाली राम का बताया हुआ झरोखा दिखाई दिया। वह झरोखा जमीन पर से दस हाथ ऊँचाई पर था, फिर भी डाकू नहीं डरा, उस झरोखे से चांदनी की किरणें पड़ने तक इन्तज़ार करता रहा, तब उसने तीन बार 'ऊँभ्रांति, ऊँभ्रांति, ऊँभ्रांति।' मंत्र पढ़कर झरोखे पर कदम रखा। अपने हाथ से किरणों को पकड़ने का स्वांग रचकर खजाने के अन्दर कूद पड़ा।

पर उसके हाथ में सिवाय हवा के कुछ न लगा। ऊपर से गिरने से उसके दोनों हाथ टूट गये। दूसरे दिन राज भटों ने खजाने के दर्वाजे खोल दिये, तब डाकू वहां पर हिलने की हालत में न था, इसलिए वह बड़ी आसानी से उनके हाथ लगा। डाकू के साथ उस के द्वारा लूटा हुआ सारा माल भी मिल गया।

इसके बाद तेनाली राम ने राज दरबार में बताया कि डाकू को पकड़ने केलिए उसने कैसी युक्ति की। इस पर सभी दरबारी हंसते-हंसते लोट पोट हो गये।

डाकू को पकड़वा देने के उपलक्ष्य में श्री कृष्णदेव राय ने तेनाली राम को बढ़िया पुरस्कार दिया।

बिना लाभ का काम

एक गाँव में धनगुप्त नामक फुटकर चीज़ें बेचने वाला एक दूकानदार था। वह कोई भी काम करता तो व्यापार के ढंग पर ही करता। वह प्रकट रूप में सब से कहता-फिरता— 'मैं बिना लाभ का कोई काम नहीं करता ।'

धनगुप्त के पड़ोस में गंगा नाथ नामक एक गृहस्थ रहा करता था। उस के मन में यह कुतूहल था, धनगुप्त बिना लाभ का कोई काम करे तो देख लूँ! पर दिन बीतते गये, लेकिन उसकी इच्छा पूरी नहीं हुई। आखिर गंगानाथ ऊब गया। धनगुप्त के द्वारा बिना लाभ का कोई काम कराने का निश्चय करके उस ने सुई मांगी। धनगुप्त ने तुरन्त दे दी। गंगानाथ ने अपने फटे कुर्ते को सी लिया और धनगुप्त को सुई वापस दे दी।

गंगानाथ यह सोच कर सन्तुष्ट हुआ कि उस ने धनगुप्त से बिना लाभ का काम करवा दिया है। फिर कुछ दिन बाद उसने धनगुप्त से हथौड़ी मांग कर ले ली और दो दिन बाद उसे लौटा दी। इस बार भी धन गुप्त कुछ नहीं बोला, चुप रह गया।

गंगानाथ से आखिर रहा नहीं गया, तो दर्प में आकर बोला— "मैं तुम्हारे हाथों से बिना लाभ के दो काम करवा दिये है ।"

धनगुप्त मुस्कुरा कर बोला— "मैं बिना लाभ का काम अपने सपने में भी नहीं करता ।"

"मैं ने तुम्हारी सुई ली, इस से तुम्हारा क्या लाभ हुआ ?" गंगानाथ ने पूछा ।

"तुमने जो धागा बचाया, उस से मैं ने अपनी धोती सी ली ।" धनगुप्त ने उत्तर दिया ।

इस पर गंगानाथ चौंक उठा और पूछा— "तो फिर हथौड़ी की बात क्या है ?"

उस की मूठ की लकड़ी ढीली हो गई थी। मैं ने अपनी सुस्ती की वजहसे उसे वैसे ही छोड़ रखा था। इस बीच तुमने मांग ली ।" धनगुप्त ने जवाब दिया ।

तब जाकर गंगानाथ को स्मरण आया कि जब वह दीवार में खूँटे ठोक रहा था, तब हथौड़ी की लकड़ी निकल आई और उसने उसमें छैला रखकर उस को ठीक किया था ।
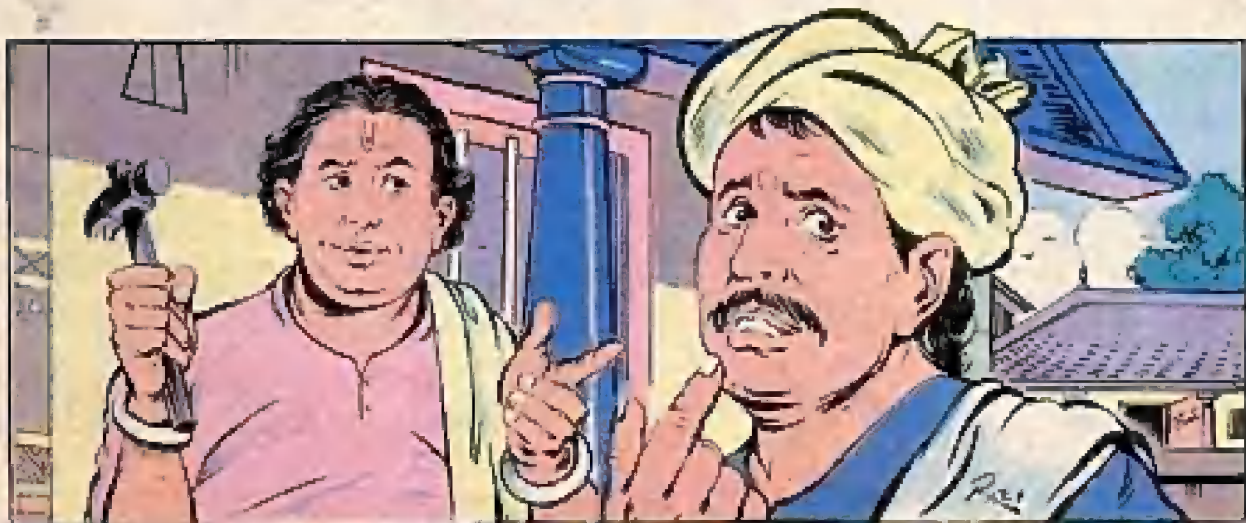
अनोखी चाल

बगदाद नगर की सीमा पर एक गाँव में दुपहर के समय कुछ लोग पेड़ की छाया में बैठ कर गपशप कर रहे थे। उस वक्त उनके पास अधेढ़ उम्र का एक आदमी आया। वह कोई अजनबी था। उसके कपड़े मैल हो चुके थे। सिर हिलाते वह इस ढंग से चल रहा था, हठात् देखने पर वह कोई पागल जैसा लग रहा था।

आगन्तुक ने पेड़ के नीचे बैठे उन लोगों के समीप आकर एक बार सब के चेहरों को परख कर देखा और कहा— "सुख के साथ दुख लगा रहता है। विजय से लगकर पराजय होती है !"

ग्राम वासियों ने उस अजनबी की ओर विस्मय के साथ देखा और उस से पूछा— "बताइये आप क्या कहना चाहते हैं ?"

"मैं ने अनुभव के द्वारा जिस सत्य को साक्षात्कार किया, वही सत्य आप लोगों को बताया।" इन शब्दों के साथ वह यों सुनाने लगाः

मैं नगर के द्वारों में से एक का पहरेदार था। एक चांदनी रात को द्वार से सट कर मैं ऊँघ रहा था। तब एक कोमल हाथ ने मेरे कन्धे का स्पर्श किया। मैंने झट आँखें खोल दीं। मेरे सामने एक सुन्दर नारी मुस्कुराते हुए मुझे दिखाई दी।

मैं ने उस नारी से पूछा— "तुम कौन हो ? इस आधी रात के वक्त यहाँ पर तुम्हें क्या काम है ?"

उस नारी ने मेरे प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया, उल्टे कुछ चांदी के सिक्के मेरे हाथ पर थमाते हुए फिर मुस्कुरा उठी।

मैं ने कहा— "सुनो, मैं कोई रिश्वतखोर नहीं हूँ ! ताकि तुम मुझे लालच दिखा कर मेरे द्वारा कोई अपना स्वार्थ साध सके।"

"यह रिश्वत नहीं, रिश्वत का मतलब एक गलत काम में मदद पहुँचाने केलिए दिया जाने वाला धन है। मैं इस वक्त तुम्हें यह जो धन दे

रही हूँ, यह एक अच्छे काम में मेरी सहायता करने के लिए !" उस नारी ने कहा ।

"वह अच्छा काम क्या है ?" मैं ने पूछा ।

"अलग हुई दो सहेलियों को फिर से मिलाने का काम क्या अच्छा नहीं कहलाता ? इस नगर के काजी की पुत्री और मैं—हम दोनों मित्र हैं। पर न मालूम क्यों काजी हम दोनों का मिलना पसन्द नहीं करते । इसलिए काजी की बेटी मेरे वियोग में व्याकुल है । आज की रात मुझ को काजी के घर बिताने में तुम्हें मदद देनी होगी ! मैं समझती हूँ, यह काम तुम्हारे लिए कोई कठिन और खतरे का भी नहीं है ।" उस महिला ने कहा ।

"यह कैसे संभव है ?" मैं आश्चर्य में आकर बोला ।

"तुम अगर दिल लगा कर मदद देना चाहे तो यह कोई मुश्किल का काम नहीं है !" यह कह कर उस नारी ने बताया कि मुझ को क्या क्या करना है !

मैं उस नारी को साथ लेकर काजी के घर पहुँचा और दर्वाजा खट खटाया । काजी ने आकर किवाड़ खोला । इस पर मैं ने कहा—"महाशय, यह नारी किसी दूसरे नगर की निवासिनी है । यह अपने एक रिश्तेदार से मिलने आई, लेकिन उस के निवास का पता खो चुकी है । आप के घर के चबूतरे पर बैठे इस को रोते हुए मैं ने देखा । मैं इस नारी के पिता को जानता हूँ । यह एक अच्छे और

प्रतिष्ठित परिवार की महिला है । इस के बदन पर सोने के गहने हैं ! एक नारी को रात के वक्त गली के चबूतरे पर रहना हितकर नहीं है । आज की रात इसको आप के घर में विश्राम करने की अनुमति दीजिए ।"

काजी न्यायाध्यक्ष है । इसलिए मेरी बात को इनकार नहीं कर सका और उस नारी को अपने घर में आने दिया ।

उस दिन रात को मैं पहरे का काम पूरा करके अपने घर चला गया । लेकिन थोड़ी देर बाद कुछ और सिपाहियों ने आकर मेरे दर्वाजे पर जोर से दस्तक देना शुरू किया ।

मैं ने क्रोध में आकर किवाड़ खोला और दस्तक देने का कारण पूछा । सिपाहियों ने मुझ

को कोत्वाल के पास हाज़िर होने को कहा। मैं उनके साथ कोत्वाल के पास पहुँचा।

वहाँ पर कोत्वाल के पास काजी भी बैठा हुआ था। काजी ने मुझे देखते ही गरज कर पूछा— "अरे दुष्ट, तुम्हारी वह दुष्ट दोस्त कहाँ ?"

यह सवाल सुन कर मैं विस्मय में आ गया, इसके बाद मुझे मालूम हुआ कि पिछली रात को मैं ने काजी के घर जिस औरत को आश्रय दिलाया था, वह औरत काजी के घर के सारे आभूषणों के साथ, उस के धन को भी चुरा कर भाग गई है।

"अरे उस औरत के साथी चोर ! तुम्हारी मौत निश्चित है !" यह कह कर काजी हांफते हुए गरज उठा।

मैं थर-थर कांप उठा और बोला— "सरकार। कानून के अनुसार अपराधी को अपने को निर्दोष साबित करने के लिए अथवा उस के कारण जो नुक़सान हुआ हो, उसे भरने केलिए तीन दिन की अवधि दी जाती है। इसलिए मुझ को भी तीन दिन की मोहलत दीजिएगा।"

मेरी विनती को कोत्वाल के साथ काजी ने भी मान लिया। मैं ने उस नारी की खोज में सारा नगर दो दिन छान डाला। पर वह कहीं दिखाई नही दी। अब मुझे यह डर सताने लगा कि मेरी मौत निश्चित है।

लेकिन तीसरे दिन रात को एक मकान की खिड़की में से उस नारी का चेहरा मुझे दिखाई दिया। मुझे देखते ही वह मुस्कुरा उठी और अपने समीप आने केलिए हाथ का इशारा किया। मैं उस की ओर दौड़ते हुए दांत पीस कर गरज उठा— "अरी चुड़ैल, तुम अब मेरे हाथ में आ गई हो ! अब मैं देखता हूँ कि तुम मेरे चंगुल से बचकर कैसे निकल सकती हो ?"

वह जरा भी विचलित नहीं हुई। निडर हो जोर से हंस कर बोली— "दर असल मैं तुम्हारे हाथों में नहीं फंसी, बल्कि चाहे किसी उपाय से भी क्यों न हो, मैं ने तुम को पकड़ लिया है।"

"जानती हो, तुम्हारी वजह से मुझ पर कैसी मुसीबत आ गई !" मैं ने क्रोध में आकर पूछा।

"तुम्हारे कारण क्या मुझ को कम कष्टों का सामना करना पड़ा । तुम क्या जानो ? तुम केवल अपनी मुसीबतों का बयान करते हो !" उस नारी ने मुझसे उल्टा सवाल किया ।

"मेरे कारण तुम्हें कष्ट झेलना पडा ? सो कैसे ? मैं भी तो सुन लूँ ?" मैं ने अचरज में आकर पूछा ।

वह नारी मंदहास करते पल-दो पल चुप रही, फिर बोली— "तुम भी कैसे भोले हो ! जानते हो, मैं खिडकी में से होकर गली की ओर क्यों ताक रही थी ? मैं जानती थी कि किसी न किसी दिन तुम इस गली से होकर जरूर गुजर जाओगे ।"

"तुम बेहूदी बातें मत करो । मेरी मदद से तुम काजी के घर पहुँची और तुमने उनके घर को लूट लिया और मुझको बदनाम किया । अब तुम्हें मेरे साथ काम ही क्या है ?" मैं ने धमकी के स्वर में उससे पूछा ।

"काजी ने अन्याय पूर्वक जो धन कमाया है, उस को मैं ने चुराया है, यह बात सही है । जानते हो, मैं ने यह काम क्यों किया है ? देखो, मैं ने इसी आशा से यह काम किया है कि इस के बाद हम दोनों शादी करके इस धन से आराम से अपना जीवन बिता सकते हैं !"

यह कह कर उस ने एक अलमारी खोल कर दिखाया, उसमें सोने के आभूषणों के साथ काफी धन भी भरा हुआ था ।

मैं विस्फारित नेत्रों से उस धन की ओर देखता ही रह गया, फिर बोला— "बात तो सही है । लेकिन फिलहाल मैं मुसीबतों में फँसा हुआ हूँ । मुझ पर यह आरोप लगाया गया है कि काजी के घर पर जो चोरी हुई है, उस में तुम्हारे साथ मेरा भी हिस्सा है ।"

"बस, यही बात है ! डरो मत ! मैं ने एक उपाय किया है, जिस के द्वारा यह साबित किया जा सकता है कि सच्चे माने में काजी ही अपराधी है ।"

यह कह कर उसने मुझे अपनी सारी योजना बताई ।

उस योजना को सुन कर हम थोड़ी देर हंस पड़े । इस के बाद मैं वहाँ से कोत्वाल के यहाँ

पहुँचा और बोला— "हुजूर, मेरा विश्वास है कि वह औरत अब तक काजी के घर में ही है। मैं ने इधर-उधर उसकी तलाश की, मुझे जो आधार मिले, उन के बल पर मेरा यह विश्वास और पक्का हो गया है कि सच्चा अपराधी तो खुद काजी हैं। इसलिए मैं काजी के घर की तलाशी लेना चाहता हूँ।"

इस के बाद कोत्वाल और मैं— हम दोनों काजी के घर पहुँचे। हमारी बातें सुन कर काजी को आश्चर्य के साथ क्रोध भी आ गया। फिर भी उसने अपने घर की तलाशी लेने को मान लिया।

मैं काजी के सारे मकान की तलाशी लेते हुए एक ऐसी कोठरी में पहुँचा जिस में लकड़ी के भारी बकसे रखे हुए थे। उन बकसों के पीछे झांकते हुए मैं ने काजी से पूछा— "महानुभाव, उस नारी ने जो कपड़े पहने थे, क्या आप उन का रंग बता सकते हैं !"

"मुझे ऐसा ख्याल है... वह पीले रंग के कपड़े धारण कर चुकी थी।" काजी बोला।

दूसरे ही क्षण मैं ने एक बकसे के पीछे से औरतें धारण करने वाला एक कपडा बाहर निकाला। उसका रंग पीला था। उस पर जहाँ-तहाँ खून के लाल-लाल धब्बे लगे हुए थे।

उसे देखते ही काजी और कोत्वाल एक दम चकित रह गये। दो-चार मिनट केलिए वहाँ पर नीरवता छा गई।

कोत्वाल ने अपना गला संवार कर काजी से पूछा— "काजी साहब, आपने उस नारी की हत्या क्यों की ?"

"हत्या ? क्या मैं ने उस औरत की हत्या की है ? आप यह क्या कह रहे हैं ?" यों कह कर काजी अचानक अचेत से होकर लुढ़क पड़े।

कोत्वाल को काजी पर दया आ गई। वह काजी को सांत्वना देकर बोला— "आप डरिये मत ! यह हत्या आप के घर के किसी और व्यक्ति ने की होगी। आपके प्रति मैं थोड़ी उदारता बरतना चाहता हूँ। आप पर कोई आफ़त नहीं आएगी। जो कुछ हुआ-उस सारी घटना को आप भूल जाइये।" फिर वे मेरी

तरफ़ मुड़ कर आदेश पूर्ण स्वर में बोले— "सुनो, तुम यह बात किसी पर भूल से भी प्रकट मत करो ।"

"हुजूर ! मैं आप के हुक्म का पालन करूँगा ।" मैं ने सन्तुष्टि पूर्वक जवाब दिया ।

इस प्रसंग के बाद मैं कोत्वाल के साथ काजी के घर से बाहर निकला, मन ही मन खुश हुआ । फिर थोड़ी देर बाद मैं उस नारी के घर की ओर चल पड़ा । मैं उस नारी की समझदारी और चालाकी पर मन ही मन चकित था । उसने एक तो काजी का घर लूट लिया, साथ ही उसी घर में उसी की हत्या के सबूत भी छोड़ आई । यह भी कैसी चालाक औरत थी ।

मैं ने उस नारी के मकान पर पहुँच कर देखा, उस पर ताला लगा हुआ था । मैं बड़ी देर तक उस औरत का इन्तजार करता रहा, आखिर ऊब गया और मैं ने पडोस के मालिक से पूछा कि इस मकान की मालकिन कहाँ गई है ।

"क्या बोले ! वह इस घर की मालकिन है ? यह मकान इधर कुछ दिनों से उजड़ा पड़ा हुआ था । लेकिन यह बात सही है कि इधर तीन-चार दिनों से एक औरत इस मकान में रह रही थी । आज उस औरत को इस मकान को खाली करके जाते हुए हमने देखा ।" पडोसी ने जवाब दिया ।

इस घटना के बाद मैं एक बावरे की भाँति इधर-उधर भटक रहा हूँ ।

इस प्रकार मैं ने अपनी कहानी सुनाकर पेड़ की छाया में बैठे हुए लोगों से पूछा— "उस धूर्त नारी को काजी का घर लूटने में मैं ने मदद पहुँचाई । प्रतिष्ठा पूर्वक अपनी ज़िन्दगी बिताने वाले काजी की प्रतिष्ठा मेरे कारण मिट्टी में मिल गई । इस सारी घटना का मूलकारण मेरा लालच और मेरी बेवकूफी है ! ऐसा व्यक्ति मैं एक साधारण मानव की तरह कैसे व्यवहार कर सकता हूँ ? आप ही लोग बताइए !"

ग्राम वासियों के दिल में मेरे प्रति अत्यन्त सहानुभूति पैदा हो गई और उन लोगों ने मुझ से उन के साथ पेड़ की छाया में बैठने का अनुरोध किया ।

पहुँचा और बोला— "हुजूर, मेरा विश्वास है कि वह औरत अब तक काजी के घर में ही है। मैं ने इधर-उधर उसकी तलाश की, मुझे जो आधार मिले, उन के बल पर मेरा यह विश्वास और पक्का हो गया है कि सच्चा अपराधी तो खुद काजी हैं। इसलिए मैं काजी के घर की तलाशी लेना चाहता हूँ ।"

इस के बाद कोत्वाल और मैं— हम दोनों काजी के घर पहुँचे। हमारी बातें सुन कर काजी को आश्चर्य के साथ क्रोध भी आ गया। फिर भी उसने अपने घर की तलाशी लेने को मान लिया ।

मैं काजी के सारे मकान की तलाशी लेते हुए एक ऐसी कोठरी में पहुँचा जिस में लकड़ी के भारी बकसे रखे हुए थे। उन बकसों के पीछे झांकते हुए मैं ने काजी से पूछा— "महानुभाव, उस नारी ने जो कपड़े पहने थे, क्या आप उन का रंग बता सकते हैं !"

"मुझे ऐसा ख्याल है... वह पीले रंग के कपड़े धारण कर चुकी थी ।" काजी बोला।

दूसरे ही क्षण मैं ने एक बकसे के पीछे से औरतें धारण करने वाला एक कपडा बाहर निकाला । उसका रंग पीला था । उस पर जहाँ-तहाँ खून के लाल-लाल धब्बे लगे हुए थे ।

उसे देखते ही काजी और कोत्वाल एक दम चकित रह गये। दो-चार मिनट केलिए वहाँ पर नीरवता छा गई ।

कोत्वाल ने अपना गला संवार कर काजी से पूछा— "काजी साहब, आपने उस नारी की हत्या क्यों की ?"

"हत्या ? क्या मैं ने उस औरत की हत्या की है ? आप यह क्या कह रहे हैं ?" यों कह कर काजी अचानक अचेत से होकर लुढ़क पड़े ।

कोत्वाल को काजी पर दया आ गई। वह काजी को सांत्वना देकर बोला— "आप डरिये मत ! यह हत्या आप के घर के किसी और व्यक्ति ने की होगी । आपके प्रति मैं थोड़ी उदारता बरतना चाहता हूँ । आप पर कोई आफ़त नहीं आएगी। जो कुछ हुआ-उस सारी घटना को आप भूल जाइये ।" फिर वे मेरी

तरफ़ मुड़ कर आदेश पूर्ण स्वर में बोले— "सुनो, तुम यह बात किसी पर भूल से भी प्रकट मत करो ।"

"हुजूर ! मैं आप के हुक्म का पालन करूँगा ।" मैं ने सन्तुष्टि पूर्वक जवाब दिया ।

इस प्रसंग के बाद मैं कोत्वाल के साथ काजी के घर से बाहर निकला, मन ही मन खुश हुआ । फिर थोड़ी देर बाद मैं उस नारी के घर की ओर चल पड़ा । मैं उस नारी की समझदारी और चालाकी पर मन ही मन चकित था । उसने एक तो काजी का घर लूट लिया, साथ ही उसी घर में उसी की हत्या के सबूत भी छोड़ आई । यह भी कैसी चालाक औरत थी ।

मैं ने उस नारी के मकान पर पहुँच कर देखा, उस पर ताला लगा हुआ था । मैं बड़ी देर तक उस औरत का इन्तजार करता रहा, आखिर ऊब गया और मैं ने पडोस के मालिक से पूछा कि इस मकान की मालकिन कहाँ गई है ।

"क्या बोले ! वह इस घर की मालकिन है ? यह मकान इधर कुछ दिनों से उजड़ा पड़ा हुआ था । लेकिन यह बात सही है कि इधर तीन-चार दिनों से एक औरत इस मकान में रह रही थी । आज उस औरत को इस मकान को खाली करके जाते हुए हमने देखा ।" पडोसी ने जवाब दिया ।

इस घटना के बाद मैं एक बावरे की भांति इधर-उधर भटक रहा हूँ ।

इस प्रकार मैं ने अपनी कहानी सुनाकर पेड़ की छाया में बैठे हुए लोगों से पूछा— "उस धूर्त नारी को काजी का घर लूटने में मैं ने मदद पहुँचाई । प्रतिष्ठा पूर्वक अपनी ज़िन्दगी बिताने वाले काजी की प्रतिष्ठा मेरे कारण मिट्टी में मिल गई । इस सारी घटना का मूलकारण मेरा लालच और मेरी बेवकूफी है ! ऐसा व्यक्ति मैं एक साधारण मानव की तरह कैसे व्यवहार कर सकता हूँ ? आप ही लोग बताइए !"

ग्राम वासियों के दिल में मेरे प्रति अत्यन्त सहानुभूति पैदा हो गई और उन लोगों ने मुझ से उन के साथ पेड़ की छाया में बैठने का अनुरोध किया ।

सच्चा भेद

रामलाल और श्यामलाल शिवपुरी के दो व्यापारी थे। वे दोनों व्यापार के मामले में जहाजों पर विदेशों में जाया करते थे। एक बार वे दोनों जब एक जहाज पर शिवपुरी को लौट रहे थे, तब श्यामलाल ने राम लाल को दो हीरे दिखा कर कहा— "मैं ने अपनी जिन्दगी में पहली बार बहुत सारा धन लगा कर ये हीरे खरीद लिये पर अब तो मुझे समुद्री डाकुओं का डर सता रहा है !"

रामलाल ने उसे सलाह दी कि वह अपने हीरों को कमर में कसी धोती की तहों में छिपा कर रखे। इसके बाद दूसरे दिन समुद्री डाकुओं ने उन के जहाज को रोक दिया और उन के पास पहुँचे। डाकुओं के सरदार ने गरज कर उन की ओर तलवार दिखाते हुए कहा— "तुम लोग नाहक अपने प्राण गँवा न दो। तुम्हारे पास जो भी क़ीमती चीज़ें हैं, हमारे हाथों में सौंप दो।"

इस पर रामलाल और श्यामलाल ने विदेशों में जो चीज़ें ख़रीद ली थीं, उन की गठरियों के साथ पेटियाँ भी डाकुओं के सरदार के हाथ सौंप दीं।

"'तुम लोगों ने सारी चीज़ें दे दीं या कुछ और छिपा रखी हैं ?" यह कह कर डाकुओं का सरदार उन के समीप जाने को हुआ। तुरंत रामलाल श्यामलाल से बोला— "दोस्त, प्राणों से क्या धन का महत्व ज़्यादा है, वे दो हीरे भी दे दो।"

इस पर श्यामलाल ने अपने छिपाये हुए दोनों हीरों को डाकुओं के सरदार के हाथ दे दिया। डाकुओं के चले जाने के बाद श्यामलाल ने गुस्से में आकर रामलाल से कहा— "दोस्त, मैं ने कभी नहीं सोचा था कि तुम मेरे साथ ऐसा विश्वासघात करोगे !"

रामलाल ने शांति पूर्वक अपनी कमर में बन्धे चमड़े के कमरबन्द को खोल कर श्यामलाल को दिखाया और कहा— "इस के अन्दर तुम्हारे हीरों से कहीं ज़्यादा क़ीमत के बीस हीरे हैं, तुम चार हीरे ले लो। मैं ने डाकुओं के सरदार से ऐसा क्यों कहा था, इस रहस्य को तुम समझ नहीं पाये। यदि मैं ऐसा न कहता तो तुम्हारे वस्त्रों के साथ मेरे वस्त्रों की भी खोज करके ये सारे हीरे हड़प ले जाते।"

शिवपुराण

सृष्टि के पूर्व जब सारा विश्व जल मग्न हो गया, पदार्थ शून्य हो अन्धकार में डूब गया, तब जल में से एक महा तेज का अद्भव हुआ। कालक्रम में उसी तेज ने ज्योतिर्लिंग का स्वरूप धारण कर लिया। वही परमेश्वर शिव है। उस ज्योतिर्लिंग के अर्द्ध भाग से महाशक्ति पैदा हुई। उसी महाशक्ति को प्रकृति तथा महामाया नाम से पुकारते हैं।

कालक्रम में परमेश्वरी और परमेश्वर ने महा विष्णु की सृष्टि की। महाविष्णु की नाभि में से महा पद्म का जन्म हुआ। वह कई योजन लम्बा था और देखने में अत्यन्त अद्भुत और आश्चर्य जनक प्रतीत हो रहा था। उस महा पद्म में से पंच मुखी ब्रह्म का उदय हुआ। उसी ब्रह्मा के साथ सरस्वती भी उदित हुई।

समस्त विश्व को जलमय देख ब्रह्मा के मन में यह जिज्ञासा पैदा हुई कि उनके जन्म स्थान बने महापद्म के मूल का पता लगाया जाय। इसी विचार से प्रेरित होकर वे ऊर्ध्व तथा अधो लोकों का चक्कर लगा कर पुनः पद्म के गर्भ में लौट आये। ब्रह्मा ने ओंकार का जाप किया, परिणाम स्वरूप विष्णु उन के सामने प्रत्यक्ष हुए। ब्रह्मा का विचार था कि वे ही इस सृष्टि में प्रथम व्यक्ति हैं, लेकिन अपने समक्ष विष्णु को देख कर उन का कौतूहल जागउठा और उन्होंने विष्णु से पूछा— "आप कौन हैं? यहाँ पर क्यों आये?"

"सृष्टि की रचना करने केलिए मैं ने अपने नाभि-कमल से तुम्हें पैदा किया है। मैं विष्णु हूँ और तुम्हारा सृष्टिकर्ता हूँ, समझें।" विष्णु ने

कहा ।

इस पर ब्रह्म का अहं जागृत हुआ, वे रोष में आकर बोले— "आप अपनी वाचालता बन्द कीजिए । वरना मेरे साथ युद्ध केलिए तैयार हो जाइए । मैं स्वयंभू हूँ । इस जगत का कर्ता-धर्ता हूँ !"

इस पर विष्णु ने ध्यान किया । तत्काल परमेश्वर ज्वाला लिंग के रूप में ब्रह्मा तथा विष्णु के बीच प्रत्यक्ष हुए । इस पर विष्णु ने ब्रह्मा से कहा— "हम दोनों में से जो इस ज्वाला लिंग के आदि और अन्त का पता लगायेंगे, वे ही महान हैं वे ही बड़े हैं ।" ब्रह्मा ने विष्णु की बात मान ली । पर इस प्रयत्न में दोनों हार गये और यथा स्थान को लौट कर परमेश्वर के प्रति प्रार्थना की ।

परमेश्वर ने उनके समक्ष प्रत्यक्ष होकर ब्रह्मा से कहा— "तुम पंच भूतों से पूर्ण विश्व की सृष्टि करने के लिए इस विष्णु के नाभि-कमल से सृजित हुए हो । इसलिए सृष्टि का कार्य प्रारम्भ कर दो ।"

ब्रह्मा ने परमेश्वर को देखकर पूछा— "तुम कौन हो ? मेरे समान तुम्हारे लिए भी पांच मुख क्यों हैं ? मैं तो सृष्टिकर्ता हूँ । इसलिए मेरे लिए पांच मुखों का होना समुचित है !"

ब्रह्मा की बातें सुन कर परमेश्वर ने रुद्र रूप धारण कर लिया और अपने दायें हाथ की छिगुनी के नख को चाकू के रूप में प्रयोग करके ब्रह्मा के पांच मुखों में से एक को काट डाला । इस पर ब्रह्मा का गर्व चूर चूर हो गया और उन्होंने परमेश्वर से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की ।

तब परमेश्वर ने अपने रौद्र रूप को त्याग कर शान्त रूप धारण किया और बोले— "हे ब्रह्मा, तुम सृष्टि की रचना करने केलिए और ये विष्णु सृष्टि की रक्षा करने केलिए सृजित हुए हैं । मैं लयकारक शिव, रुद्र और ईश्वर के रूप में पुकारा जाऊँगा । आप लोग ज्वाला लिंग की-पार्थिवलिंग तथा शिव लिंग के रूप में पूजा कीजिए ।" यह कह कर वे उस ज्वाला लिंग में लीन हो गये ।

इस के बाद ब्रह्मा विष्णु से वेद इत्यादि को लेकर पद्मासन लगा कर बैठ गये और ओंकार

का जाप करने लगे। उस समय पानी पर तैरते हुए एक अण्ड ब्रह्मा की तरफ़ चलाआया। ब्रह्मा ने उस की ओर विस्मय के साथ देखा। इतने में उस अण्डे से ॐ की ध्वनि निकली। वह जिस मार्ग से आया था, उसी मार्ग में ब्रह्मा ने उस अण्डे में प्रवेश किया। उस के भीतर गाढ़ा अन्धकार छाया हुआ था। ब्रह्मा ने वहाँ पर अपने शरीर को त्याग दिया और चतुर्मुख के रूप में पुनः जन्म धारण किया। ब्रह्म जब अण्ड में से बाहर आये, तब वह दो टुकड़ों में फट गया। इस पर उस का निचला भाग पृथ्वी के रूप में तथा ऊपर का भाग आकाश के रूप में परिवर्तित हुआ और उसका सारा जल सूख गया

इस स्थिति को देख ब्रह्म बहुत प्रसन्न हुए। और पृथ्वी पर समस्त चल और अचल की सृष्टि करना प्रारम्भ किया। ब्रह्मा ने सर्व प्रथम सनक, सनन्द आदि की सृष्टि की। लेकिन उन में सृष्टि की रचना करने की आसक्ति न रही, और वे परमेश्वर का ध्यान करते हुए तपस्या करने केलिए चले गये। इसे देख कर ब्रह्म विकल होकर जोर से रो पड़े।

इस पर उन के आँसू पृथ्वी पर गिर पड़े, उस में से अत्यन्त तेज स्वरूप के साथ शिवजी उत्पन्न हो गये।

उन का रूप स्वच्छ और सफ़ेद था। दश-दिशाओं में उस तेज का प्रकाश फैलते देख ब्रह्मा ने विस्मय में आकर पूछा— "तुम कौन हो ?"

"मैं शिव हूँ, रुद्र हूँ।" शिवजी ने उत्तर दिया।

उस समय विष्णु ने प्रत्यक्ष होकर समझाया— "हे ब्रह्म ! तुम ने सृष्टि की रचना की, मैं उस का पोषण करने वाला याने स्थिति कारक हूँ, उन चर और अचर को लय करने के लिए परमेश्वर ही इस प्रकार शिव के रूप में पैदा हुए हैं !"

इस के बाद ब्रह्मा के लिए सत्य लोक, विष्णु के लिए वैकुण्ठ और शिव के लिए कैलास निवास स्थान बन गये। तब ब्रह्म सत्य लोक में चले गये और उन्होंने अपने सहायक के रूप में रहने के लिए मरीचि, कश्यप, दक्ष, गौतम, वशिष्ट, कर्दम आदि नौ उप ब्रह्माओं की सृष्टि

की ।

उन में से दक्ष के लिए चौंसठ पुत्रियाँ पैदा हो गईं । उन में से अदिति इत्यादि दस कन्याओं के साथ कश्यप ने विवाह कर लिया और कई बच्चों का जन्म दिया । अदिति के गर्भ से इंद्र आदि देवता पैदा हुए । दिति के गर्भ से दैत्य पैदा हुए । विनता के गर्भ से गरुड और अनूर पैदा हुए । कद्रुव के गर्भ से सर्प पैदा हुए और स्वय की खोक से यक्ष और राक्षस पैदा हुए ।

शिवजी के साथ विवाह करने केलिए महेश्वरी सती के नाम से दक्ष की पुत्री के रूप में पैदा हुई । जब उन दोनों का विवाह हुआ, तब ब्रह्म, विष्णु, इंद्र आदि देवता उस विवाह को देखने आये और सती तथा शिवजी का अनेक प्रकार से स्तोत्र किया । अतिथियों का स्वागत और सत्कार करने केलिए शिवजी ने नन्दीश्वर तथा काल भैरव को नियुक्त किया, तथा शिवजी अपनी सती के साथ कैलास में जाकर सुख पूर्वक रहने लगे ।

थोड़ा समय बीत गया । अनेक महानुभावों ने यज्ञ करने का संकल्प करके ब्रह्म, विष्णु, महेश्वर, इत्यादि देवताओं को निमंत्रित कर यज्ञ प्रारम्भ किया ।

यज्ञ में पधारे हुए महानुआवों केलिए निवास आदि का प्रबन्ध करने केलिए महर्षियों ने यथोचित आसनों का प्रबन्ध किया और उन को सादर उन आसनों पर बिठाया । सब लोग यज्ञ का अवलोकन कर रहे थे । उस वक्त दक्ष अपने शिष्यों के साथ वहाँ पर पधारे । तुरन्त सभा में उपस्थित सभी लोग दक्षके सामने गये, उन को आदर पूर्वक लिवा लाकर बिठाया । दक्ष ने सभा में चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ा कर ब्रह्म तथा विष्णु को प्रणाम किया, पर उनके दामाद शिवजी ने उठ कर उनके प्रति आदर नहीं दर्शाया, इसे भांपकर उन्होंने सभासदों से कहा— "आप सब ने आगे बढ़ कर मेरा आदर किया । पर ये ईश्वर मेरे दामाद बन गये, इसलिए इसने उठ कर मेरे प्रति आदर नहीं दर्शाया, मेरा परामर्श तक न करके मेरी उपेक्षा की । यह तो छोटे-बड़े का विवेक तक नहीं रखता ।" यह कह कर अपने शिष्यों के साथ वहाँ से चले जाने को तैयार हुए ।

इसे देख ब्रह्म, विष्णु इत्यादि उठ कर आगे बढे और उनको रोक कर समझाया— "ये तो ईश्वर हैं, परमेश्वर के अवतार हैं। उनकी इस प्रकार निन्दा करना अनुचित है।"

उस समय नन्दी क्रोध में आये और दक्ष को शाप दिया— "तुमने शिवजी की निंदा की, इसलिए तुम्हारा सिर कट कर होमकुण्ड में गिर जाय!"

इस पर दक्ष रूठ गये और उन्होंने भी शाप दिया— "तुम्हारे रुद्रगण वेदों के आचारों से दूर होकर, आचार व नियमों से हट कर, पाखण्ड कहलाओगे!"

इस घटना के बाद भी शिवजी यज्ञ की समाप्ति तक रहकर अपने रुद्रगणों को साथ लेकर कैलास में चले गये।

इसके बाद दक्ष अपने शिष्य भृगु इत्यादि ऋषियों को साथ ले कर अपने आश्रम को लौट आये। उन्होंने वाजियेय नामक यज्ञ किया। वे पहले ही शिव जी से असन्तुष्ट थे। इसलिए उन्हों ने उस यज्ञ में शिवजी के लिए हविष का प्रबन्ध नहीं किया।

इस पर भी शिवजी पर दक्ष का क्रोध शान्त न हुआ। इसलिए उन्होंने "बृहस्पति यज्ञ" नाम से एक महा यज्ञ का संकलप किया, इस के लिए देवता, तथा महर्षियों को निमंत्रण दिया, आगन्तुकों का स्वागत और सत्कार करने केलिए अपने शिष्यों तथा बन्धु-बान्धवों को नियुक्त किया।

इस यज्ञ में भी दक्ष ने शिवजी के लिए हविष का अंश देना नहीं चाहा।

इस यज्ञ में विश्व देवता, मरुत्त, पितृगण, अप्सराएँ, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर, किन्नर, यक्ष, कश्यप, अगत्स्य, अत्रि, भृगु, मरीचि, नारद, पराशर, आदि महर्षि पधारे। ब्रह्म तथा विष्णु को छोड़ कर शेष सब लोग दक्ष के भय से ही पधारे थे। आगंतुकों के ठहरने के वास्ते उचित प्रबन्ध करने केलिए विश्व कर्म नियुक्त किये गये थे।

दक्ष ने यज्ञ-दीक्षा लेकर अपनी पत्नी के साथ यज्ञशाला में प्रवेश किया, सभा में उपस्थित लोगों को प्रणाम किया। शिवजी को निमंत्रण नहीं दिया गया था। इसलिए वे

आ गये और बोले— "हे दक्ष, याद रखियेगा. यह याग सफल नहीं हो सकता। शिवजी के विना आपने इस याग का संकल्प करके दुख और विपदा को मोल लिया है। इस यज्ञ में उपस्थित लोग भी दुखी हो जायेंगे।" यह कह कर वे उसी वक्त वामदेव, मरीचि, गौतम, शिलाद इत्यादि अनेक ऋषियों के साथ उस सभा से चले गये।

इसके बाद दक्ष ने सभा में उपस्थित लोगों को सम्बोधित कर कहा— "अभी अभी जो ऋषि सभा से चले गये, वे सब पाखण्ड और शठ हैं। यहाँ से उन का चला जाना अच्छा हुआ। इसलिए आप लोग इस बात की बिलकुल चिंता न कीजिए, मेरे यज्ञ को सम्पन्न कीजिए!"

उपस्थित न थे। ब्रह्म तथा विष्णु निमंत्रण पाकर भी अनुपस्थित थे। असंख्य देवताओं तथा महर्षियों से भरी उस सभा में शिवजी के भक्त मरिचि, दधीचि, भृगु उपस्थित थे, उन लोगों ने चारों तरफ़ सभा का अवलोकन करके दक्ष से पूछा— "हे दक्ष, क्या आप ने इस सभा में उपस्थित होने के लिए सती देवि तथा शिवजी को निमंत्रण नहीं दिया ? वे दोनों यहाँ पर अनुपस्थित क्यों हैं ?"

दक्ष ने कहा— "शिव कर्म से भ्रष्ट है, इसलिए उस को निमंत्रण नहीं दिया। उल्टे वह अपवित्र, कपालधारी, श्मशानवासी तथा प्रेत गणों का प्रभु है।"

शिवजी की निन्दा सुनकर दधीचि क्रोध में

इस बीच कैलास पर्वत पर शिवजी के साथ सुखपूर्वक गृहस्थी चलाने वाली सतीदेवि एक दिन अपनी सखियों के साथ उद्यान में विहार कर रही थी, उस वक्त सतीदेवि ने देखा, आकाश में अनेक विमान उड़े चले जा रहे हैं। इस पर सतीदेवि ने अपनी सखियों को आदेश दिया— "तुम लोग पता लगा कर मुझे सूचित करो, वे विमान कहाँ पर उड़े चले जा रहे हैं।" सखियों ने लौट कर बताया कि सारे विमान यात्री दक्ष के द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में भाग लेने केलिए जा रहे हैं।

सतीदेवि के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि

अपने पिता के द्वारा संपन्न किये जाने वाले यज्ञ में अपने पति देव के साथ भाग ले। फिर क्या था, उसने शिवजी के पास जाकर पूछा— "सुनते हैं, मेरे पिताजी यज्ञ कर रहे हैं। देवगण सब उसमें भाग लेने के लिए जा रहे हैं। हम भी रुद्र गणों को साथ लेकर उस यज्ञ में भाग लेने के लिए चले जायेंगे।"

इस पर शिवजी ने सतीदेवि को सावधान करते हुए बताया— "सती, तुम्हारे पिता हम से द्वेष करते हैं। इसीलिए वे हम को निमंत्रण दिये बिना ही यज्ञ कर रहे हैं। बिना निमंत्रण के ही इस यज्ञ में जाना उचित नहीं है। यदि हम उदार हृदय को लेकर जाते हैं तो निश्चय ही हमारा अपमान होगा। इसके बाद खतरे पैदा हो जायेंगे।"

"तब तो आप मत आइए, मैं अकेली चली जाऊँगी। मेरे पिताजी मेरा अपमान क्यों करेंगे? यदि मेरे पिता व्यस्तता में भूल गये हो तो मैं उनको याद दिला कर उनके हाथों से निमंत्रण भिजवा दूँगी। इस लिए आप नन्दीश्वर वगैरह का साथ देकर मुझे भेज दीजिए।" सतीदेवि ने कहा।

"सती, तुम को छोड़ कर मैं पल भर भी नहीं रह सकता। तुम मुझ को छोड़ कर तुम्हारे पिता के द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में भाग लेने जा रही हो। मेरा अनुमान है कि निश्चय ही तुम्हारा वहाँ पर अपमान होगा। परिणाम स्वरूप खतरा भी उपस्थित होगा। इसलिए भविष्य के बारे में अच्छी तरह से सोच लो।" इस प्रकार शिवजी ने सतीदेवि को समझाया।

पर सतीदेवि शिवजी की बातों के मर्म और सत्य को समझ नहीं पाई। वह इस बात की कल्पना भी नहीं कर पाई कि उसी के माता-पिता उस का अपमान करेंगे। इसलिए शिवजी के हित वचन के बावजूद भी उसने अपने पीहर जाने का हठ किया।

शिवजी ने सोचा-होनी होकर ही रहेगी। उस को कोई रोक नहीं सकता,फिर क्या था, उन्होंने रुद्रगणों का साथ देकर सतीदेवि को दक्ष-यज्ञ देखने केलिए भेज दिया।
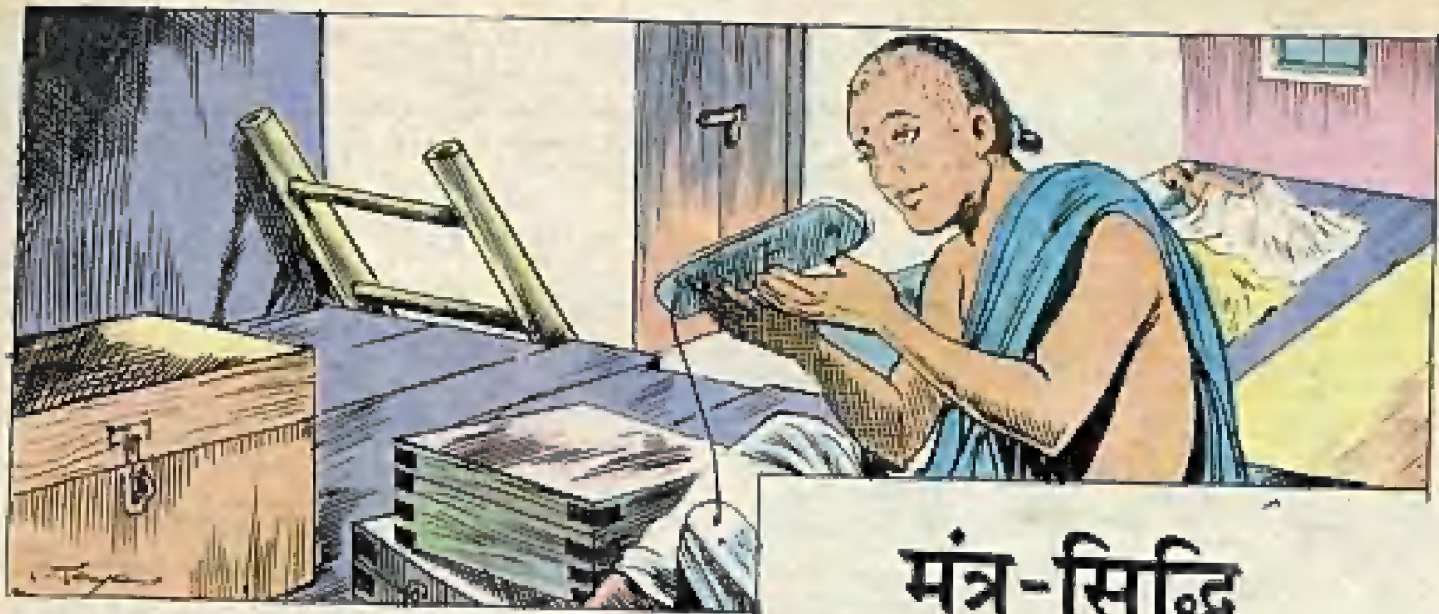
मंत्र-सिद्धि

महादेवशास्त्री नामक एक पंडित एक गुरुकुल चलाते थे। उस गुरुकुल में वृषभ नामक एक विद्यार्थी था। वह स्वभाव से जल्दबाज था। उसके मन में यह आतुरता जागृत हुई कि हो सके तो एक ही दिन में समस्त शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करके अपने सहपाठियों को पीछे छोड़ देना है।

वृषभ अपनी इस इच्छा की पूर्ति के लिए निरंतर सोचता रहा। पर उसे कोई उपाय न सूझा। आखिर उसे अपनी इच्छा की पूर्ति करने के लिए एक मौक़ा मिल गया।

आचार्य जी के घर की अटारी पर कुछ पुराने ताड़ पत्रों के ग्रन्थ पड़े हुए थे। लोगों का विचार था कि वे सारे ग्रन्थ मंत्र शास्त्र से सम्बन्धित हैं! वृषभ के मन में उन ग्रन्थों को देखने का कुतूहल था, पर आचार्य ने उनको छूने से मना कर दिया था। इस कारण उनके शिष्यों में से किसी ने उनको पढ़ने का प्रयत्न नहीं किया। लेकिन वृषभ के मन में उन ग्रन्थों को पढ़ने की अदम्य इच्छा थी।

एक बार आचार्य महादेव शास्त्री को किसी खास काम से राजधानी में जाना पड़ा। एक हफ्ते में लौटने की बात अपने शिष्यों को बता कर वे राजधानी को चल पड़े।

उस दिन रात को जब सभी सहपाठी गहरी नींद सो रहे थे, तब वृषभ चुपचाप अटारी पर चढ़ गया और एक ताड़ पत्र ग्रन्थ को खोल कर देखा। उस में एक मंत्र था। उस मंत्र का भावार्थ था कि उस मंत्र का जाप करने पर कोई भी मनुष्य अपनी इच्छा के अनुरूप किसी भी रूप को धारण कर सकता है। इस रहस्य को जान कर वृषभ उछल पड़ा और उस मंत्र को दो-चार बार पढ़ कर कंठाग्र कर लिया और उत्साह के साथ अटारी पर से नीचे उतर आया।

इसके बाद वृषभ अपने सहपाठियों से अपने को कहीं महान व्यक्ति समझकर फूला न

रघुनन्दन

समाया ।

दूसरे दिन प्रातः काल सभी शिष्य समिधाएं जुटाने और पत्तल सीने के लिए पत्तों के वास्ते जंगल में चले गये । वहाँ पर वृषभ अपने मन पर क़ाबू न रख पाया और जोश में आकर अपने साथियों से बताया कि वह एक अद्भुत मंत्र जानता है । लेकिन उसके साथी वृषभ की बातों पर विश्वास न करके उलटे उसका मजाक़ उड़ाने लगे ।

इस पर वृषभ उत्तेजित हो उठा और बोला— "मैं चाहूं तो इसी वक्त मंत्र जाप कर कोई भी रूप पा सकता हूं ।"

एक शिष्य ने मुस्कुराते हुए कहा— "तो तुम्हारा नाम वृषभ है न ? अपने नाम के अनुरूप तुम इसी वक्त बैल का रूप धारण कर लो ।"

तत्काल वृषभ ने मंत्र जापकर बैल का रूप धारण कर लिया । सभी शिष्य विस्मय में आकर उसकी ओर देखते ही रह गये !

लेकिन इतने में थोड़ी दूर से बाघ का गर्जन सुनाई दिया । दूसरे ही क्षण में उन लोगों की बगल में से कुछ जानवर भागते हुए नज़र आये । सभी शिष्य भयभीत होकर समीप के पेड़ों पर चढ़ गये । बैल रूपधारी वृषभ को तब उसकी गलती मालूम हुई । वह सिर्फ़ मंत्र जाप कर किसी रूप को धारण करना मात्र जानता था, लेकिन उस रूप को त्याग कर फिर से मनुष्य का रूप धारण कर सकने वाला मंत्र वह नहीं जानता था ।

वृषभ यही विचार कर रहा था कि अब क्या किया जाय ! तभी बाघ उस ओर आ निकला । बाघ को देखते ही वह डर गया और पीछे मुड़ कर हांफते हुए दौड़ पड़ा । आखिर किसी तरह बाघ के मुँह में जाने से अपने को बचा कर जंगल को पार कर वह एक गाँव में पहुँचा ।

तब तक भोजन का वक्त हो गया था । काफी दूर दौड़ने की वजह से वृषभ को भूख लग रही थी । वह समझ गया कि बैल के रूप में रहने के कारण कोई भी गृहस्थ उसको खाना न देगा । फिर अपनी भूख कैसे मिटाई जाय यही सवाल उसके सामने था । इस चिंता में पड़ कर वह मन ही मन पछताने लगा कि मैं ने जान-बूझ कर यह आफ़त क्यों मोल ली और

जल्दबाजी में आकर कैसी भयंकर भूल की।

अनिच्छापूर्वक ही वृषभ निकट के एक ज्वार के खेत में पहुँचा और उस के अन्दर घुस गया। लेकिन उस खेत का रखवाला वृषभ को देखते ही एक लाठी लेकर दौड़ा-दौड़ा आया और तड़ातड़ उसकी बगल और पीठ पर लाठी चलाने लगा। पीड़ा के मारे चिल्लाते हुए वृषभ गाँव के अन्दर भाग गया।

लेकिन वृषभ की मुसीबतें यहाँ तक खतम नहीं हुईं। वह गाँव की गलियों में चक्कर लगाने लगा। उस समय पहाड़ जैसा एक विशाल सांड उसके सामने आ गया। उसको देखते ही डर के मारे वह पीछे मुड़ गया। पर सांड रंभाते हुए दौड़ा आया और उस पर हमला करके उस पर सींग मारने लगा।

सांड से बचने केलिए वह गली-कूचों में दौड़ कर थोड़ी देर बाद उस की नजरों से ओझल हो गया।

इसके बाद वह एक पेड़ की छाया में खड़े होकर अपनी थकावट मिटा रहा था, तब मवेशियों के सौदागर भैरवनाथ ने उसको देख लिया। उस बैल को देखते ही भैरव ने भांप लिया कि वह उस गाँव का बैल नहीं है और कहीं से भटक कर इस गाँव में चला आया है।

भैरव ने वृषभ के समीप जाकर अपनी लाठी से हांक कर धीरे से उसको अपने मवेशीख़ाने में पहुँचा दिया और वहाँ पर उसको एक खूंटे से बांध दिया।

उस दिन और रात को भी वृषभ भूख की पीड़ा से तड़पता रहा और आखिर लाचार हो
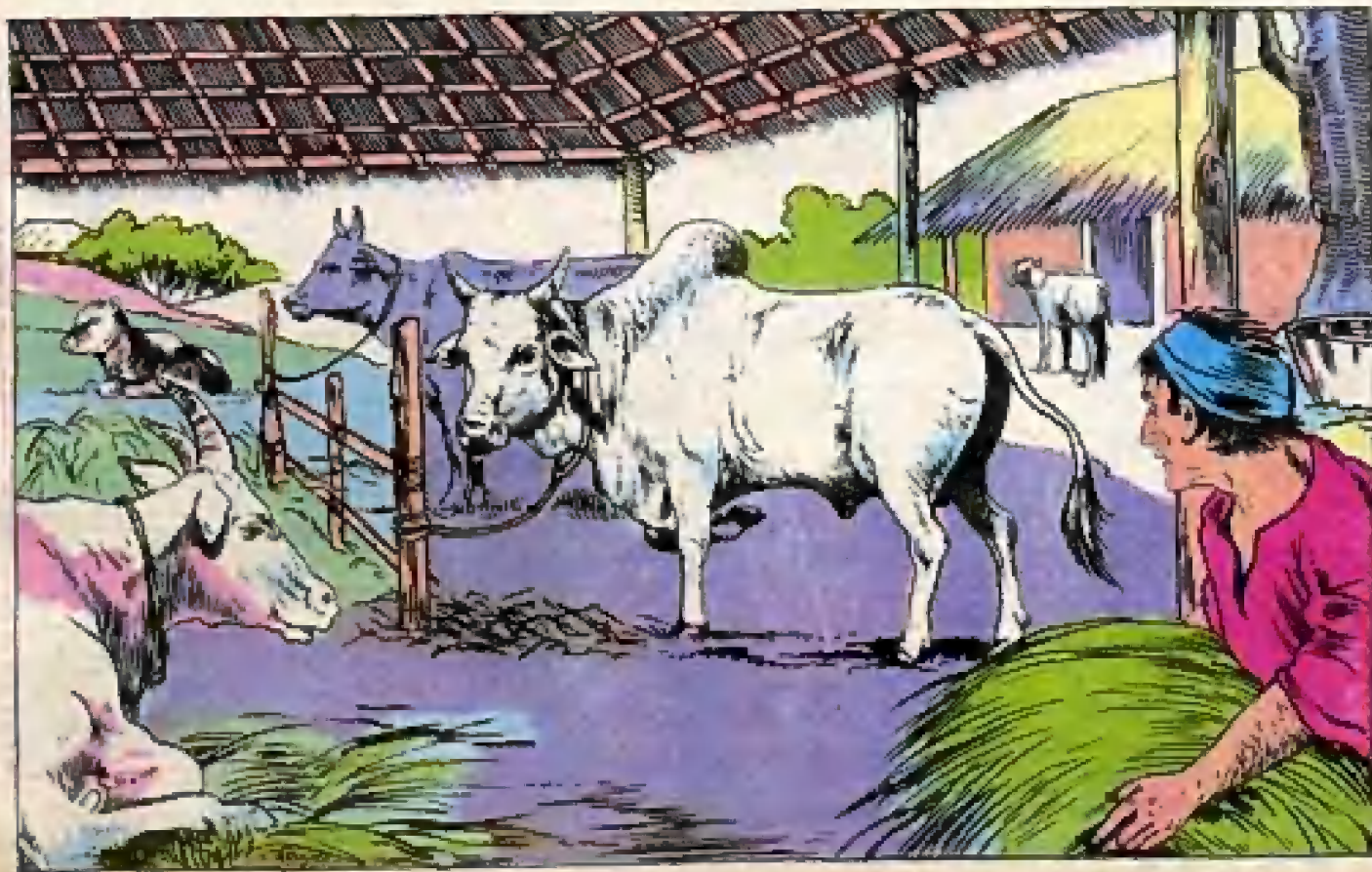
कर अन्य पशुओं का चारा ही उसे चबाना पड़ा।

उसे बैल की जिंदगी नरक तुल्य प्रतीत हुई।

दूसरे दिन भैरव ने अपने दूसरे बैल के साथ वृषभ को भी अपनी गाड़ी में जोत दिया। पर वृषभ को दूसरे बैल के साथ क़दम मिला कर चलना मुश्किल मालूम हुआ। भैरव ने बड़ी सब्रता के साथ चार-पांच दिन तक वृषभ को गाड़ी खींचने की आदत डालने की कोशिश की पर कोई फ़ायदा न रहा। इस से खीझ कर एक दिन भैरव ने वृषभ को नादिया वाले के हाथ बेचना चाहा।

वृषभ को देख नादिया वाला बहुत सन्तुष्ट हुआ और सौदा पटाकर बोला कि कल सुबह आकर बैल की नाक में रस्सा सीकर हांक ले जाएगा।

नाक में रस्सा सीने की बात सुनते ही वृषभ डर के मारे एक दम कांप उठा। क्यों कि उसने खुद देख लिया था कि नादिया वाले सुआ से बैलों की नाक में छेद करके कैसे रस्सा सी लेते हैं और उस वक्त बैल पीड़ा के मारे कैसे छट पटाता है!

उस दिन रात को उसने अपनी सारी ताक़त लगा कर खींचातानी की और अंत में उसने रस्से को तोड़ डाला और भागते हुए सूर्योदय तक वह गुरुकुल में जा पहुँचा।

उस समय तक गुरुकुल के आचार्य महादेव शास्त्री राजधानी से गुरुकुल को लौट आये थे। उनके शिष्यों ने आचार्य को जंगल में बीता हुआ सारा वृत्तान्त पहले ही सुना दिया था। बैल के रूप में आँसू बहाते हुए वृषभ जब आचार्य के सामने पहुँचा तब आचार्य को उस की हालत पर बड़ी दया आ गई। उन्होंने कोई मंत्र जाप कर वृषभ को फिर से मनुष्य का रूप दिलाया।

वृषभ फफक-फफक कर रोते हुए आचार्य के चरणों पर गिर पड़ा और बैल के रूप में उसने जो यातनाएँ झेली थीं सविस्तार उनको कह सुनाया।

इसके बाद वृषभ ने फिर कभी मंत्र शास्त्र की बात नहीं उठाई और जल्दबाजी किये बिना धीरे-धीरे अपने मन पर क़ाबू रखने की आदत डाल ली।
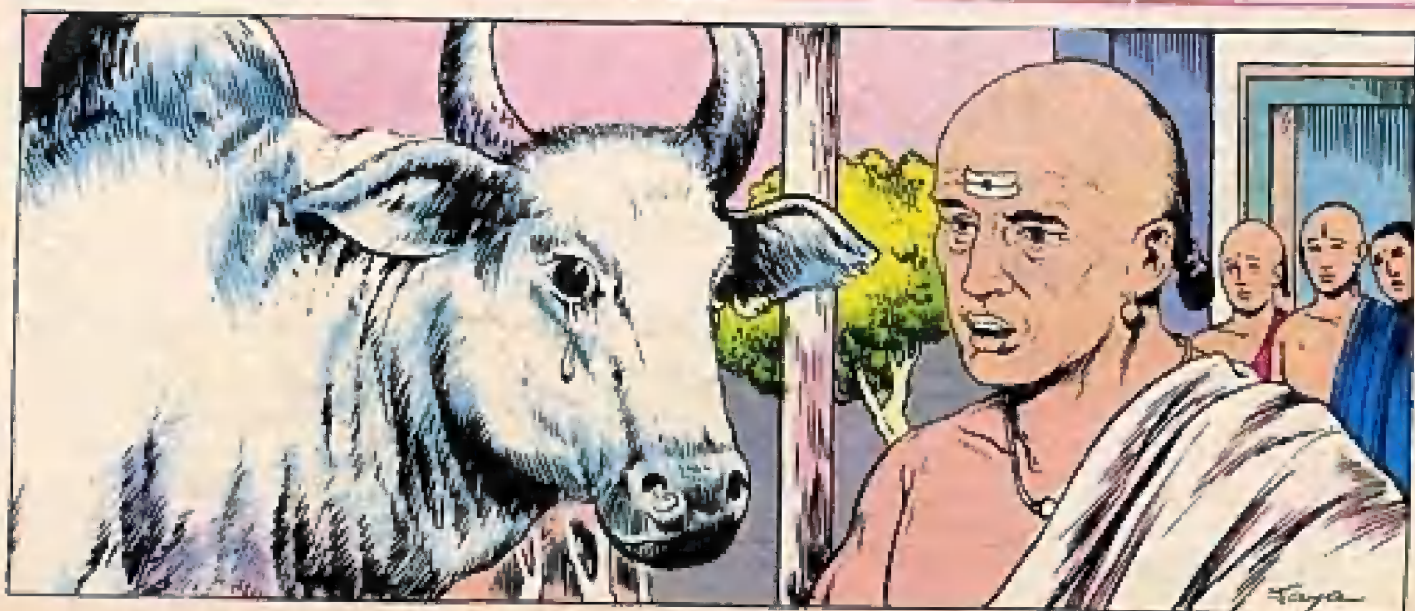
पक्षी और जानवर

मोर

खुले हुए मोर पंख वाले मोर का दृश्य अद्भुत होता है ! नीले, हरे व पीले रंगों के साथ चमकने वाला नर मोर का पंख दर्शकों को पुलकित कर देता है । पर मोर की कंठध्वनि अत्यन्त कठोर होती है ।

प्राचीन काल से हमारे देश में ही नहीं बल्कि ग्रीक, चीन इत्यादि दोशों में भी मोर के पंखों से विशेष रूप से आकृष्ट होकर उसको सजावट के काम में लाते रहे हैं । प्राचीन ग्रीक के निवासियों का विश्वास है कि आर्गास राजकुमारी की रक्षा केलिए हीरा देवी ने एक हजार नेत्रों के पंख वाले मोर को नियुक्त किया था । इसीलिए वे लोग मोर को हीरा पक्षी पुकारा करते थे । चीन के राजा अधिकारियों का सत्कार करने केलिए मोर के पंखों से निर्मित पंखा पुरस्कार में दिया करते थे ।

सोना और अपूर्व मणियों से निर्मित मुगल कालीन मयूर सिंहासन विश्व विख्यात है ।

यूरोप में चिरकाल से उद्यान वनों की शोभा बढ़ाने के लिए मोर पालते आ रहे है, फिर भी मयूर भारत तथा श्रीलंका केलिए निज स्थान का पक्षी है ।

पृथ्वी पर या पृथ्वी को छूने वाली डालों पर मयूर अपने घोंसले बनाते हैं । मोरनी एक साथ छः अण्डे देती है । दो वर्ष की आयु तक मोर और मोरनी के बीच कोई अन्तर दिखाई नहीं पड़ता । इसके बाद नर मयूरों में सुन्दर पंख लग जाते हैं । डालों पर अपने पंख खोल कर के खडे रहने वाले मोर की अपेक्षा उड़ने वाला मोर अत्यन्त शोभायमान दीखता है ।

मोर हमारा राष्ट्रीय पक्षी है ।
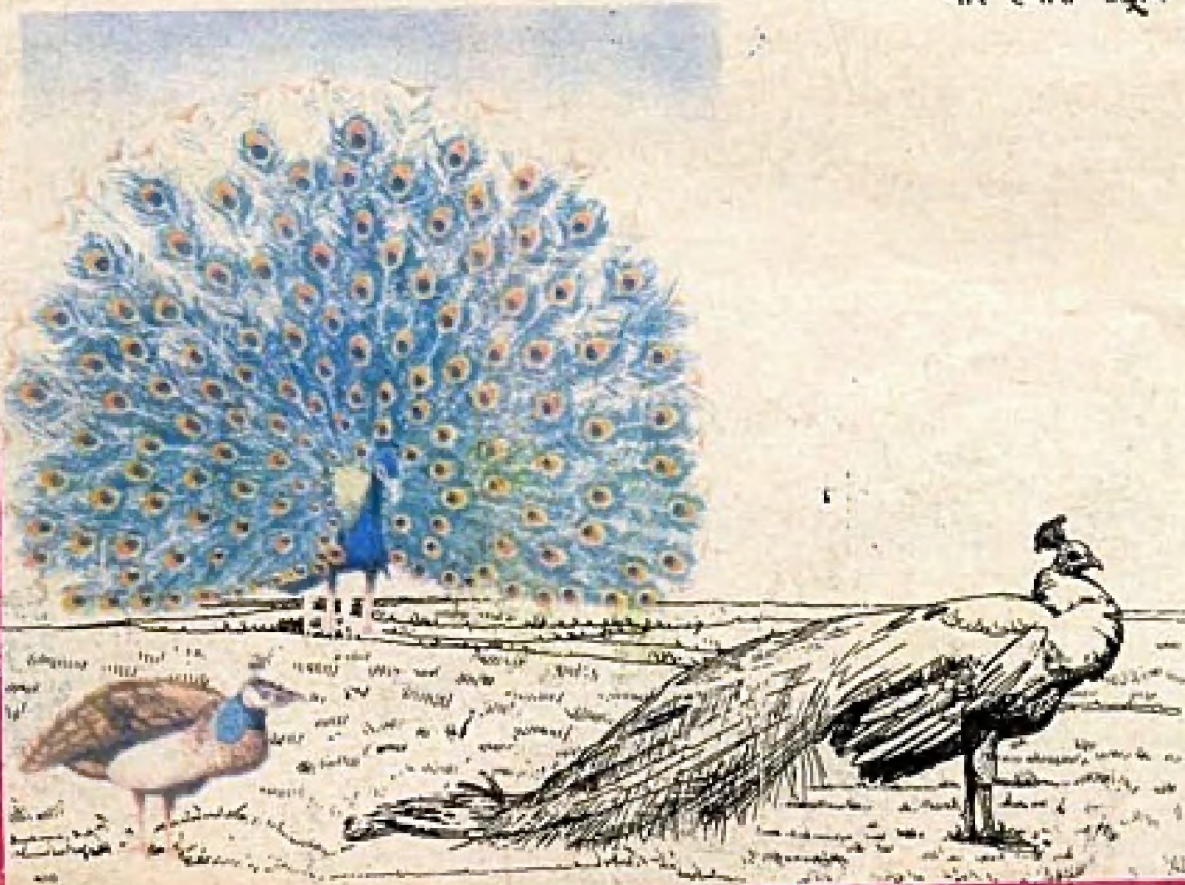
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अप्रैल १९८५ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ फरवरी १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

दिसम्बर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : संभलकर करना पार पटरी!

द्वितीय फोटो : पापा चले गये, रह गई छतरी!!

प्रेषक : हेमन्त सिन्धे, ७८०, महावर नगर, कोटला मुबारिकपुर, नई दिल्ली - ११०००३

क्या आप जानते हैं ? के उत्तर

१. शानफ्रान्सिस्को नगर में २५ मार्च, ११४५ में हुई थी। २. पोशापर ३. पल्लव ४. राजा घिलू ५. आगरा.

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

जब दाँतों की सड़न को मेरे बेटे ने पहचाना

331 F 183 HIN

कॅमल

वॉटर कलर्स और पोस्टर कलर्स

मीना का जन्मदिन था. राजू के लिए यह खुशी का मौका था. नंदू, विनय, रेखा, अशोक सभी बच्चे शानदार तोहफे लाने वाले थे.

राजू की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या दे. वह कोई खास चीज़ देना चाहता था, जो सबसे अलग नज़र आये.

उसने बहुत देर तक इस बारे में सोचा. अचानक उसके दिमाग में एक बात आई.

उसने सोचा— क्यों न एक अच्छा सा मुखौटा बना कर दिया जाए? जिसकी टोपी में हरी पट्टियाँ हों, गालों पर गुलाबी रंग और लाल-लाल होंठ.

उसने जल्दी-जल्दी में गत्ते का एक टुकड़ा लिया और ब्रश से उस पर तेज़ हाथ चलाये. फिर क्या था— मुखौटा तैयार हो गया. उसने उसे काटकर रख लिया.

मीना ने जब उस रंग-बिरंगे तोहफे को देखा, तो वह खुशी से नाच उठी. हर कोई राजू और उसके तोहफे की तारीफ़ कर रहा था. अगर राजू रंगने का काम कर सकता है तो तुम क्यों नहीं!

कॅम्लिन प्रायव्हेट लिमिटेड
आर्ट मटीरियल डिविजन,
बम्बई-४०० ०५९.

कैम्लिन अनब्रेकेबल पेन्सिल बनानेवालों की ओर से

VISION 791 HIN

Results of Chandamama Camlin Colouring Contest No.38 (Hindi)

1st Prize: Miss. Meena J. Vasu, Bombay-67. *2nd Prize:* Rishi Rattan, Simla-9. Zoher Husain, Burhanpur. Gajundra P. Rdurakar, Wardha-442 001. *3rd Prize:* Anurag Gautam, New Delhi-21. Nishant Kr, Kirra. Vijendra Khadgi, Ratlam. Krishnakant Laxmanrao Polkondwar, Nanded. Thagata Ray, Muradanagar. Thomas Mundu, Manoharpur. Dinesh R. Chaurasia, Bombay-4. Arvind Kumar Singh, Jamshedpur-11. Rajesh Tayal, Hissar-125 005. Shubhra Rajan, Sitapur.